॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद॥

॥ अथ सप्तमं काण्डम्॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ – आत्मा सूक्त 10

सूक्त २- आत्मा सूक्त..... 12

सूक्त ३- आत्मा सूक्त..... 13

सूक्त ४ – विश्वप्राण सूक्त..... 14

सूक्त ५ – आत्मा सूक्त..... 15

सूक्त ६ – अदिति सूक्त..... 18

सूक्त ७ – आदित्यगण सूक्त..... 20

सूक्त ८- आदित्यगण सूक्त..... 22

सूक्त ९- शत्रुनाशन सूक्त 23

सूक्त १० – स्वस्तिदा पूषा सूक्त..... 24

सूक्त ११ – सरस्वती सूक्त 27

सूक्त १२ – राष्ट्रसभा सूक्त 27

सूक्त १३ – शत्रुनाशन सूक्त..... 29

सूक्त १४ – सविता सूक्त 31

सूक्त १५ – सविता सूक्त 33

सूक्त १६- सविता सूक्त..... 36

सूक्त १७ – सविताप्रार्थना सूक्त..... 37

सूक्त १८ – द्रविणार्थप्रार्थना सूक्त 38

सूक्त १९ – वृष्टि सूक्त 40

सूक्त २० – प्रजा सूक्त 42
सूक्त २१ – अनुमति सूक्त 43
सूक्त २२ – एको विभुः सूक्त 46
सूक्त २३ – ज्योति सूक्त 47
२४ – दुवप्ननाशन सूक्त 49
सूक्त २५ – सविता सूक्त 50
सूक्त २६ – विष्णु सूक्त 51
सूक्त २७ – विष्णु सूक्त 53
सूक्त २८ – इडा सूक्त 57
सूक्त २९ – स्वस्ति सूक्त 58
सूक्त ३० – अग्राविष्णू सूक्त 59
सूक्त ३१ – अञ्जन सूक्त 61
सूक्त ३२ – शत्रुनाशन सूक्त 62
सूक्त ३३ – दीर्घायु सूक्त 63
सूक्त ३४ – दीर्घायु सूक्त 64
सूक्त ३५ – शत्रुनाशन सूक्त 65
सूक्त ३६ – सपत्नीनाशन सूक्त 66
सूक्त ३७ – अञ्जन सूक्त 68
सूक्त ३८ – वास सूक्त 69
सूक्त ३९ – केवलपति सूक्त 70

सूक्त ४० – आपः सूक्त 73
सूक्त ४१ – सरस्वान् सूक्त 74
सूक्त ४२ – सुपर्ण सूक्त 76
सूक्त ४३ – पापमोचन सूक्त 78
सूक्त ४४ – वाक् सूक्त 80
सूक्त ४५ – इन्द्राविष्णू सूक्त 81
सूक्त ४६ – ईर्ष्या निवारण सूक्त 82
सूक्त ४७ – ईर्ष्या निवारण सूक्त 83
सूक्त ४८ – सिनीवाली सूक्त 84
सूक्त ४९ – कुहू सूक्त 86
सूक्त ५० – राका सूक्त 88
सूक्त ५१ – देवपत्नी सूक्त 90
सूक्त ५२ – विजय सूक्त 92
सूक्त ५३ – परिपाण सूक्त 97
सूक्त ५४ – सांमनस्य सूक्त 98
सूक्त ५५ – दीर्घायु सूक्त 100
सूक्त ५६ – विघ्नशमन सूक्त 104
सूक्त ५७ – मार्गस्वस्त्य अयन सूक्त 105
सूक्त ५८ – विषभेषज्य सूक्त 107
सूक्त ५९ – सरस्वती सूक्त 111

सूक्त ६०- अन्न सूक्त 113
सूक्त ६१ – शापमोचन सूक्त..... 115
सूक्त ६२ – रम्यगृह सूक्त..... 115
सूक्त ६३ – तपः सूक्त..... 119
सूक्त ६४ – शत्रुनाशन सूक्त..... 120
सूक्त ६५ – दुरितनाशन सूक्त 121
सूक्त ६६ – पापमोचन सूक्त..... 122
सूक्त ६७ – दुरितनाशन सूक्त 123
सूक्त ६८ – ब्रह्म सूक्त..... 125
सूक्त ६९ – आत्मा सूक्त..... 126
सूक्त ७० – सरस्वती सूक्त 127
सूक्त ७१- सरस्वती सूक्त..... 128
सूक्त ७२ – सुख सूक्त 129
सूक्त ७३ – शत्रुदमन सूक्त..... 130
सूक्त ७४ – अग्नि सूक्त..... 133
सूक्त ७५ – इन्द्र सूक्त 134
सूक्त ७६ – इन्द्र सूक्त 136
सूक्त ७७ – घर्म सूक्त..... 137
सूक्त ७८ – गण्डमालाचिकित्सा सूक्त 143
सूक्त ७९ – अघ्या सूक्त 145

सूक्त ८०- गण्डमालाचिकित्सा सूक्त 147
सूक्त ८१ – गण्डमालाचिकित्सा सूक्त 149
सूक्त ८२ – शत्रुनाशन सूक्त 150
सूक्त ८३- बन्धमोचन सूक्त..... 152
सूक्त ८४ – अमावास्या सूक्त 154
सूक्त ८५- पूर्णिमा सूक्त..... 157
सूक्त ८६-सूर्य-चन्द्र सूक्त..... 160
सूक्त ८७ – अग्नि सूक्त..... 164
सूक्त ८८ – पाशमोचन सूक्त 167
सूक्त ८९ – क्षत्रभूदग्नि सूक्त..... 169
सूक्त ९० – अरिष्टनेमि सूक्त 171
सूक्त ९१ – त्राता इन्द्र सूक्त 172
सूक्त ९२- व्यापकदेव सूक्त..... 173
सूक्त ९३ – सर्पविषनाशन सूक्त..... 174
सूक्त ९४ – दिव्यआपः सूक्त 175
सूक्त ९५ – शत्रुबलनाशन सूक्त..... 177
सूक्त ९६ – सुत्रामा इन्द्र सूक्त..... 179
सूक्त ९७ – सुत्रामाइन्द्र सूक्त..... 180
सूक्त ९८- शत्रुनाशन सूक्त..... 181
सूक्त ९९ – सांमनस्य सूक्त..... 182

सूक्त १०० – शत्रुनाशन सूक्त 183
सूक्त १०१ – शत्रुनाशन सूक्त 185
सूक्त १०२ – यज्ञे सूक्त 186
सूक्त १०३ – हवि सूक्त 190
सूक्त १०४ – वेदी सूक्त 191
सूक्त १०५ – दुस्वप्ननाशन सूक्त 192
सूक्त १०६ – दुःस्वप्ननाशन सूक्त 193
सूक्त १०७ – आत्मन -अहिंसन सूक्त 194
सूक्त १०८ – क्षत्रिय सूक्त 195
सूक्त १०९ – गौ सूक्त 196
सूक्त ११० – दिव्यवचन सूक्त 197
सूक्त १११ – अमृतत्व सूक्त 198
सूक्त ११२ – संतरण सूक्त 199
सूक्त ११३- शत्रुनाशन सूक्त 200
सूक्त ११४ – राष्ट्रभृत सूक्त 202
सूक्त ११५ – शत्रुनाशन सूक्त 206
सूक्त ११६ – आत्मा सूक्त 208
सूक्त ११७ – पापनाशन सूक्त 209
सूक्त ११८- शत्रुनाशन सूक्त 210
सूक्त ११९ – शत्रुनाशन सूक्त 211

सूक्त १२० – पापलक्षणनाशन सूक्त..... 212
सूक्त १२१ – ज्वरनाशन सूक्त..... 215
सूक्त १२२- शत्रुनिवारण सूक्त 216
सूक्त १२३ – वर्मधारण सूक्त..... 217

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १ – आत्मा सूक्त

प्रजापति द्वारा संसार के लोगों को अपने अपने कर्म करने की प्रेरणा देना

धीती वा यह अनयन् वाचो अग्रं मनसा वा यहऽवदन्न् ऋतानि ।
तृतीयहन ब्रह्मणा वावृधानास्तुरीयहणामन्वत नाम धेनोः ॥७,१.१॥

जो (साधक) अपने मन एवं धी (बुद्धि) की सामर्थ्य से वाणी के मूल उत्पत्ति स्थान तक पहुँचते हैं और ऋत-सत्य वचन ही बोलते हैं, जो तीसरे (चित्त) के द्वारा ब्रह्म से संयुक्त होकर वृद्धि पाते हैं और चतुर्थ (अहंकार) द्वारा (परमात्मसत्ता के) धेनु (धारक सामर्थ्य वाले) विशेषता पर आस्था रखते हैं (वह ही परम लक्ष्य पाते हैं ।) ॥७,१.१॥

स वेद पुत्रः पितरं स मातरं स सूनुर्भुवत्स भुवत्पुनर्मघः ।

स द्यामौर्णोदन्तरिक्षं स्वः स इदं विश्वमभवत्स आभरत्॥७,१.२॥

वह (प्रथम मन्त्र के अनुसार साधना करने वाला साधक) ही (वास्तव में) उत्पन्न हुआ कहा जाता है। वह पुत्र (जीव) अपने माता-पिता (ब्रह्म एवं प्रकृति) को जान लेता है। वह पुनः- पुनः दान देने वाला (अक्षय दिव्य सम्पदा का अधिकारी हो जाता है। वह अन्तरिक्ष एवं द्युलोक को अपने अधीन कर लेता है, वह विश्वरूप हो जाता है और सर्वत्र संव्याप्त हो जाता है ॥७,१.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २- आत्मा सूक्त

प्रजापति की स्तुति

अथर्वाणं पितरं देवबन्धुं मातुर्गर्भं पितुरसुं युवानम् ।
य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्र णो वोचस्तमिहेह ब्रवः ॥१॥

जो (साधक) अविचल पिता (परमात्मा) देवों से सम्बन्ध रखने वाले माता के गर्भ तथा चिर युवा पिता के उत्पादक तेज को तथा इनके संयोग से चलने वाले इस (विश्वचंक्र रूप) यज्ञ को मनः शक्ति से देखता (जात) है। वह यहाँ बोले और हमें उसके बारे में उपदेश दे ॥७,२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३- आत्मा सूक्त

प्रजापति की स्तुति

अया विष्ठा जनयन् कर्वराणि स हि घृणिरुरुर्वराय गातुः ।
स प्रत्युदैद्धरुणं मध्वो अग्रं स्वया तन्वा तन्वमैरयत ॥७,३.१॥

वह परमात्मा इस (विश्व व्यवस्था के अनुसार) विविध श्रेष्ठ कर्मों को उत्पन्न करता हैं। वह तेजस्वी मधुरता को धारण करने वाला, वरणीय (प्रभु) विस्तृत मार्ग पर आगे बढ़ाता हुआ अपने (सूक्ष्म) शरीर से (प्राणी) साधक के शरीर को प्रेरित करता है ॥७,३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४ – विश्वप्राण सूक्त

वायु देव की स्तुति

एकया च दशभिश्च सुहुते द्वाभ्यामिष्टयह विंशत्या च ।
तिसृभिश्च वहसे त्रिंशता च वियुग्भिर्वाय इह ता वि मुञ्च
॥७,४.१॥

उत्तम प्रकार से जिनका आवाहन किया जाता है । वह सर्वप्रेरक प्रजापति तथा वायुदेव एक और दस से, दो और बीस से तथा तीन और तीस शक्तियों से विशेष प्रकार से युक्त होकर यज्ञ में पधारें और मनोकामना पूर्ण करें तथा उन शक्तियों को हमारे कल्याण के लिए मुक्त करें ॥७,४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५ – आत्मा सूक्त

यज्ञ रूप प्रजापति की प्रशंसा

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥७,५.१॥

जो पूर्व में यज्ञ द्वारा यज्ञपुरुष का यजन (पूजन) करके देवत्व को प्राप्त हुए हैं, वह इस महत्त्वपूर्ण श्रेष्ठ कर्म को सम्पन्न करके, उस सुखपूर्ण स्वर्गलोक को प्राप्त करते हैं, जहाँ पहले से ही साधन- सम्पन्न देवता रहते हैं ॥७,५.१॥

यज्ञो बभूव स आ बभूव स प्र जज्ञे स उ वावृधे पुनः ।
स देवानामधिपतिर्बभूव सो अस्मासु द्रविणमा दधातु ॥७,५.२॥

जो यज्ञ विश्वात्मारूप से प्रकट होकर सर्वत्र कारणरूप से व्याप्त हुआ, वह विशिष्ट ज्ञान का साधन बना । फिर वही वृद्धि को प्राप्त होकर, देवगणों के स्वामी के रूप में प्रसिद्ध हुआ है, ऐसा यज्ञ हमें धन प्राप्त कराए ॥७,५.२॥

यद्देवा देवान् हविषाऽयजन्तामर्त्यान् मनसा मर्त्येन ।
मदेम तत्र परमे व्योमन् पश्येम तदुदितौ सूर्यस्य ॥७,५.३॥

श्रेष्ठ कर्म से प्राप्त देवत्वधारी याजक, विरूप अमर मन से अमर देवों का यजन करते हैं। इस प्रकार परमाकाश में उदित परमात्मारूप सूर्य के सतत प्रकाश को प्राप्त करते हैं ॥७,५.३॥

यत्पुरुषेण हविषा यज्ञं देवा अतन्वत ।
अस्ति नु तस्मादोजीयो यद्विहव्येनेजिरे ॥७,५.४॥

देवताओं ने पुरुष (आत्मा) रूपी हवि से जो यज्ञ किया है। अन्य विशिष्ट हवि द्वारा किया गया यज्ञ क्या इस यज्ञ से महान् हो सकता है ? ॥७,५.४॥

मुग्धा देवा उत शुनाऽयजन्तोत गोरङ्गैः पुरुधाऽयजन्त ।
य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्र णो वोचस्तमिहेह ब्रवः ॥७,५.५॥

विवेकरहित यजमान, श्वान और गौ आदि पशुओं के अवयवों के द्वारा यजन करता है, तो यह अकर्म मूर्खतापूर्ण और निन्दनीय है । जो मन के द्वारा यज्ञ की महान् प्रक्रिया को जानते हैं, ऐसे आत्म-यज्ञ को जानने वाले परमज्ञानी महापुरुष ही परमात्मा के स्वरूप को बतलाएँ ॥७,५.५॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६ – अदिति सूक्त

पृथ्वी एवं देवमाता का वर्णन

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।
विश्वे देवा अदितिर्पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्
॥७,६.१॥

यह अदिति ही स्वर्ग और अन्तरिक्ष है । यही माता- पिता है और यही पुत्र हैं । समस्त देव एवं पंचजन भी यही अदिति है; जो उत्पन्न हुए हैं और उत्पन्न होने वाले हैं, वह भी अदिति ही हैं ॥७,६.१॥

महीमू षु मातरं सुव्रतानामृतस्य पत्नीमवसे हवामहे ।
तुविक्षत्रामजरन्तीमुरूचीं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्
॥७,६.२॥

उत्तम कर्म करने वालों का हित करने वाली, सत्य की रक्षक, अनेकानेक क्षात्र तेज दिखाने वाली, अजर, विशाल,

शुभकारी, सुख देने वाली, योग-क्षेम चलाने वाली तथा अन्न देने वाली माता अदिति को हमें रक्षा के लिए आवाहन करते हैं ॥७,६.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७ – आदित्यगण सूक्त

अदिति की स्तुति

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसो अस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तयह ॥७,६.१॥

उत्तम प्रकार से रक्षा करने वाली, अहिंसक, प्रकाशयुक्त, उत्तम सुख देने वाली, उत्तम मार्ग पर कुशलतापूर्वक चलाने वाली, पृथिवीमाता की शरण में हम जाते हैं । यह सुदृढ़ पतवार एवं अछिद्र नौका के समान तारने वाली हैं॥७,६.१॥

वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे ।
यस्या उपस्थ उर्वन्तरिक्षं सा नः शर्म त्रिवरूथं नि यछात्॥७,६.२॥

अन्न की उत्पत्ति करने के लिए अन्न देने वाली महान् माता अदिति या मातृभूमि का हम यशोगान करते हैं। जिसके ऊपर यह विशाल अन्तरिक्ष है, वह पृथिवी माता हमको त्रिगुणित सुख प्रदान करे ॥७,६.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८- आदित्यगण सूक्त

अदिति के पुत्रों अर्थात देवों का वर्णन

दितेः पुत्राणामदितेरकारिषमव देवानां बृहतामनर्मणाम् ।
तेषां हि धाम गभिषक्समुद्रियं नैनान् नमसा परो अस्ति कश्चन ॥७,७.१॥

जो असुर समुद्र के मध्य में अति गहरे स्थान में रहते हैं, उन्हें वहाँ से हटाकर, मातृभूमि की स्वाधीनता चाहने वाले देवगणों को उनके स्थान पर स्थापित करते हैं। यह देवगण योग्य हैं एवं इनकी वहाँ आवश्यकता है ॥७,८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९- शत्रुनाशन सूक्त

बहस्पति की स्तुति

भद्रादधि श्रेयः प्रेहि बृहस्पतिः पुरएता ते अस्तु ।
अथेममस्या वर आ पृथिव्या आरेशत्रुं कृणुहि सर्ववीरम् ॥७,९.१॥

हे मनुष्य ! तुम सुख को गौण एवं परम कल्याण को प्रधान मानने वाले मार्ग का अवलम्बन करो । इस देवमार्ग के मार्गदर्शक बृहस्पति (देवगुरु के समान ज्ञानी हों । इस पृथ्वी पर श्रेष्ठ वीर पुरुष उत्पन्न हों, जिससेशत्रु दूर रहें अर्थात् यहाँ शान्ति रहे ॥७,९.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १० – स्वस्तिदा पूषा सूक्त

सब के पोषक सूर्य देव की स्तुति

प्रपथे पथामजनिष्ट पूषा प्रपथे दिवः प्रपथे पृथिव्याः ।
उभे अभि प्रियतमे सधस्थे आ च परा च चरति प्रजानन्
॥७,१०.१॥

पूषा देवता, द्युलोक के मार्ग में अन्तरिक्ष के मार्ग में तथा पृथिवी के मार्ग में प्रकट होते हैं। यह देव दोनों प्रिय स्थानों में प्राणियों के कर्म के साक्षीरूप होकर विचरते हैं ॥७,१०.१॥

पूषेमा आशा अनु वेद सर्वाः सो अस्मामभयतमेन नेषत्।
स्वस्तिदा आघृणिः सर्ववीरोऽप्रयुछन् पुर एतु प्रजानन्
॥७,१०.२॥

यह पोषणकर्ता देव, सब दिशाओं को यथावत् जानते हैं। वह देव हम सबको उत्तम निर्भयता के मार्ग से ले जाते हैं। कल्याण करने वाले, तेजस्वी, बलवान् , वीर, कभी प्रमाद न करने वाले देव हमारा मार्गदर्शन करते हुए हम सबको उन्नति के मार्ग पर ले चलें ॥७,१०.२॥

पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन ।
स्तोतारस्त इह स्मसि ॥७,१०.३॥

हे देव पूषन् ! हम आपके व्रतानुष्ठान में रहने से कभी नष्ट न हों । हम आपका व्रत धारण कर आपकी स्तुति करते हुए सदैव धन, पुत्र, मित्र आदि से सम्पन्न रहें ॥७,१०.३॥

परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम् ।
पुनर्नो नष्टमाजतु सं नष्टेन गमेमहि ॥७,१०.४॥

हे पोषणकर्ता पूषादेव ! आप अपना दाहिना हाथ (उसका सहारा या अभयदान) हमें प्रदान करें। हमारे जो साधनादि नष्ट हो गए हैं, हम उन्हें पुन: प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। आपकी कृपा से वह हमें प्राप्त हों ॥७,१०.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११ – सरस्वती सूक्त

देवी सरस्वती की स्तुति

यस्ते स्तनः शशयुर्यो मयोभूर्यः सुम्नयुः सुहवो यः सुदत्रः ।
यहन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धातवे कः
॥७,११.१॥

हे सरस्वती देवि ! आपका दिव्य ज्ञानरूपी पय शान्ति देने वाला, सुख देने वाला, मन को पवित्र करने वाला, पुष्टिदाता एवं प्रार्थनीय हैं। उस दिव्य पय को हमें भी प्रदान करें ॥७,११.१॥

सूक्त १२ – राष्ट्रसभा सूक्त

पर्जन्य देव की स्तुति

यस्ते पृथु स्तनयित्नुर्य ऋष्वो दैवः केतुर्विश्वमाभूषतीदम् ।

मा नो वधीर्विद्युता देव सस्यं मोत वधी रश्मिभिः सूर्यस्य ॥७,१२.१॥

आपकी विशाल, गर्जना वाले, समस्त विश्व में व्याप्त मार्गदर्शक ध्वजा के समान इस जगत् को भूषित करने वाली विद्युत् से हम सबकी धान्यादि की क्षति न हो । सूर्यदेव की किरणों के द्वारा हमारी फसलें पुष्ट हों ॥७,१२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १३ – शत्रुनाशन सूक्त

प्रजापति की दोनों पुत्रियों, सभा तथा सभासदों की स्तुति

सभा च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने ।
यहना संगछा उप मा स शिक्षाच्चारु वदानि पितरः संगतेषु
॥७,१३.१॥

समिति और सभा प्रजापति के द्वारा पुत्रियों के समान पालन करने योग्य हैं । वह (समिति एवं सभा) प्रजापति (राजा) की रक्षा करें । हे पितरो ! जिनसे परामर्श माँगें वह सभासद मुझे उचित सलाह प्रदान करे । आप हमें सभी में विवेकसम्मत एवं नम्रतापूर्वक बोल सकने की सद्‌बुद्धि प्रदान करें ॥७,१३.१॥

विद्म ते सभे नाम नरिष्टा नाम वा असि ।
यह ते के च सभासदस्ते मे सन्तु सवाचसः ॥७,१३.२॥

हे सभे ! हम आपके नाम को जानते हैं। आपका 'नरिष्ट' (अरिष्ट्रहित) नाम उचित ही हैं। सभा के जो कोई भी सदस्य हों, वह हमारे साथ समान विचार एवं वाणी वाले होकर रहें ॥७,१३.२॥

एषामहं समासीनानां वर्चो विज्ञानमा ददे ।
अस्याः सर्वस्याः संसदो मामिन्द्र भगिनं कृणु ॥७,१३.३॥

सभा में विराजमान इन समस्त सभासदों के विशेष ज्ञान एवं वर्चस् को ग्रहण कर मैं लाभान्वित होता हैं। इन्द्रदेव हमें समस्त सभा के सामने ऐश्वर्यवान् बनाएँ ॥७,१३.३॥

यद्वो मनः परागतं यद्बद्धमिह वेह वा ।
तद्व आ वर्तयामसि मयि वो रमतां मनः ॥७,१३.४॥

है सभासदो ! हमसे विमुख हुए, आपके मनों को, हम अपनी ओर आकर्षित करते हैं। अत: आप सब सावधान होकर मेरी बात सुनें और उस पर विचार करें ॥७,१३.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १४ – सविता सूक्त

द्वेष करने वाले पुरुषों के तेज का विनाश

यथा सूर्यो नक्षत्राणामुद्यंस्तेजांस्याददे ।
एवा स्त्रीणां च पुंसां च द्विषतां वर्च आ ददे ॥७,१४.१॥

सूर्य उदित होकर, जिस प्रकार तारों के प्रकाश को अपने प्रकाश से अभिभूत करके क्षीण कर देता है, उसी प्रकार हम द्वेष करने वाले स्त्री एवं पुरुषों के वर्चस् (प्रभाव) को नष्ट करते हैं ॥७,१४.१॥

यावन्तो मा सपत्नानामायन्तं प्रतिपश्यथ ।
उद्यन्त्सूर्य इव सुप्तानां द्विषतां वर्च आ ददे ॥७,१४.२॥

सूर्य उदित होकर सोते हुए पुरुषों के तेज़ को जिस प्रकार हर लेता है, उसी प्रकार मैं उन विद्वेषियों का तेज हरण कर

लें, जो मुझे आता (प्रगति करता) देखकर कुढ़ते हैं ॥७,१४.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १५ – सविता सूक्त

सविता देव की स्तुति

अभि त्यं देवं सवितारमोण्योः कविक्रतुम् ।
अर्चामि सत्यसवं रत्नधामभि प्रियं मतिम् ॥७,१५.१॥

द्यौ और पृथ्वी लोक के रक्षक, समस्त जगत् के उत्पादक, सत्यप्रेरक, ज्ञानी, जगत्कर्ता रमणीय पदार्थों के धारक, सबके प्यारे एवं ध्यान करने योग्य सविता देव की हम उपासना करते हैं ॥७,१५.१॥

उर्ध्वा यस्यामतिर्भा अदिद्युतत्सवीमनि ।
हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपात्स्वः ॥७,१५.२॥

जिनका अपरिमित तेज, स्वेच्छा से ऊपर फैलता हुआ सब जगह प्रकाशित होता है; श्रेष्ठ कर्मकर्ता देव, जिनकी प्रेरणा

से, स्वर्णिम किरणों (हाथों) से स्वर्ग (दायक सोम) उत्पन्न करते हैं, ऐसे सवितादेवकी हम प्रार्थना करते हैं ॥७,१५.२॥

सावीर्हि देव प्रथमाय पित्रे वर्ष्माणमस्मै वरिमाणमस्मै ।
अथास्मभ्यं सवितर्वार्याणि दिवोदिव आ सुवा भूरि पश्वः
॥७,१५.३॥

हे सवितादेव ! जिस प्रकार आपने आरम्भ में जन्मे मनुष्यों को समस्त आवश्यक पदार्थ प्रदान किए हैं। उसी प्रकार इस चालक यजमान को देह (पुत्र-पौत्रादि), श्रेष्ठता एवं अन्य पशु आदि प्रदान करें ॥७,१५.३॥

दमूना देवः सविता वरेण्यो दधद्रत्नं पितृभ्य आयूंषि ।
पिबात्सोमं ममददेनमिष्टे परिज्मा चित्क्रमते अस्य धर्मणि
॥७,१५.४॥

हे देव ! आप सबके प्रेरक, सर्वश्रेष्ठ और सबको अभिलषित पदार्थ प्रदान करते हैं। पूर्व पुरुषों को धन, बल एवं आयु प्रदान करने वाले हे देव ! आप इस अभिषुत आनन्दप्रद

सोम को ग्रहण करें। वह गतिमान् देव सर्वत्र अप्रतिहत गति से संचार करते हैं ॥७,१५.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १६- सविता सूक्त

सब के प्रेरक सविता देव की स्तुति

तां सवितः सत्यसवां सुचित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्ववाराम् ।
यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनां सहस्रधारां महिषो भगाय
॥७,१५.१॥

हे सवितादेव ! हम सत्यप्रेरक, विलक्षण, सबकी रक्षा करने वाली, शोभनीय, उत्तम तथा अनेक धारा वाली, उस बुद्धि की याचना करते हैं, जिसे कण्व ऋषि ने प्राप्त किया है ॥७,१५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १७ – सवितात्प्रार्थना सूक्त

बृहस्पति एवं सविता देव की स्तुति

बृहस्पते सवितर्वर्धयैनं ज्योतयैनं महते सौभगाय ।
संशितं चित्संतरं सं शिशाधि विश्व एनमनु मदन्तु देवाः ॥७,१७.१॥

हे बृहस्पतिदेव एवं सवितादेव ! व्रतपालक यजमान के दोषों को दूर करके उसे प्रगति की प्रेरणा दें । इस यजमान को अन्य श्रेष्ठ व्रतों के पालन द्वारा सौभाग्यशाली बनाने के लिए आप उद्बोधित करें । समस्त देवगण इसका अनुमोदन करें ॥७,१७.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १८ – द्रविणार्थप्रार्थना सूक्त

धाता देव, सविता तथा प्रजापति की स्तुति

धाता दधातु नो रयिमीशानो जगतस्पतिः ।
स नः पूर्णेन यच्छतु ॥७,१८.१॥

विश्व को धारण करने वाले 'धाता देव' जगत् के ईश हैं। समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने में समर्थ देव 'धाता' हमें प्रचुर धन आदि प्रदान करें ॥७,१८.१॥

धाता दधातु दाशुषे प्राचीं जीवातुमक्षिताम् ।
वयं देवस्य धीमहि सुमतिं विश्वराधसः ॥७,१८.२॥

समस्त धन के स्वामी देव धाता' का हम श्रेष्ठ बुद्धि से ध्यान करते हैं एवं उनसे याचना करते हैं, प्रसन्न होकर वह हमें अक्षय जीवनीशक्ति प्रदान करें ॥७,१८.२॥

धाता विश्वा वार्या दधातु प्रजाकामाय दाशुषे दुरोणे ।
तस्मै देवा अमृतं सं व्ययन्तु विश्वे देवा अदितिः सजोषाः
॥७,१८.३॥

प्रज्ञा की कामना करने वाले 'धाता देवता' यजमान को श्रेष्ठ पदार्थ प्रदान करें । अदितिदेवी और अन्य देवताओं सहित समस्त देव उसे अमृत प्रदान करें ॥७,१८.३॥

धाता रातिः सवितेदं जुषन्तां प्रजापतिर्निधिपतिर्नो अग्निः ।
त्वष्टा विष्णुः प्रजया संरराणो यजमानाय द्रविणं दधातु
॥७,१८.४॥

धारक, प्रेरेक, कल्याणकर्ता सवितादेव, प्रजारक्षक, पुरुषार्थयुक्त, प्रकाशरूप अग्निदेव, त्वष्टादेव, विश्व में व्याप्त विष्णुभगवान् हमारी आहुति ग्रहण करें, प्रजा के साथ आनन्द' में रहने वाले देव यजमान को धन प्रदान करें॥७,१८.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १९ – वृष्टि सूक्त

धाता की प्रशंसा

प्र नभस्व पृथिवि भिन्द्धीदं दिव्यं नभः ।
उद्नो दिव्यस्य नो धातरीशानो वि ष्या दृतिम् ॥७,१९.१॥

हे पृथिवीमाता ! आप हल द्वारा अच्छी प्रकार जोतने पर वर्षा के जल को अच्छी प्रकार धारण करने योग्य हो जाएँ । हे पर्जन्य ! आप दिव्य मेघों के द्वारा श्रेष्ठ जल वृष्टि करें ॥७,१९.१॥

न घ्रंस्तताप न हिमो जघान प्र नभतां पृथिवी जीरदानुः ।
आपश्चिदस्मै घृतमित्क्षरन्ति यत्र सोमः सदमित्तत्र भद्रम् ॥७,१९.२॥

जहाँ सोम आदि औषधियाँ होती हैं एवं सोम की पूजा होती हैं, वहाँ सब प्रकार कल्याण होता है । वहाँ 'हिम' पीड़ित

नहीं करता, ग्रीष्म असह्य ताप नहीं देता एवं वर्षा समय से होती है, जिससे भूमि समृद्धि को प्राप्त होती है ॥७,१९.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २० – प्रजा सूक्त

प्रजापति और धाता की स्तुति

प्रजापतिर्जनयति प्रजा इमा धाता दधातु सुमनस्यमानः ।
संजानानाः संमनसः सयोनयो मयि पुष्टं पुष्टपतिर्दधातु
॥७,२०.१॥

प्रजापतिदेव पुत्र – पौत्र आदि प्रजाओं को उत्पन्न करें। पोषक धातादेव, उत्तम मन वाला बनाएँ। इससे प्रजाएँ एक मत, एक विचार युक्त एवं विवेकवान् होकर एक उद्देश्य के लिए कार्य करें। पुष्टि के देवता हमें पुष्टि प्रदान करें ॥७,२०.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २१ – अनुमति सूक्त

अनुमति नामक देवी की प्रशंसा सुख प्राप्त करने का अनुग्रह तथा सुप्रणीति देवी से यज्ञ पूर्ण करने का आग्रह

अन्वद्य नोऽनुमतिर्यज्ञं देवेषु मन्यताम् ।
अग्निश्च हव्यवाहनो भवतां दाशुषे मम ॥७,२१.१॥

(कर्मों की) अनुमति (के अभिमानी) देवी (चन्द्रमा) आज हमारे अनुकूल होकर, हमारे यज्ञ की जानकारी समस्त देवताओं तक पहुँचाएँ । अग्निदेव भी हमारे द्वारा अर्पित हवि को समस्त देवगणों तक पहुँचाएँ ॥७,२१.१॥

अन्विदनुमते त्वं मंससे शं च नस्कृधि ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः ॥७,२१.२॥

हे अनुमति नामक देवि ! आप हमें कल्याण करने वाले कार्य करने की सुबुद्धि प्रदान करें। आप अग्नि में अर्पित हवि को ग्रहण करके हमें श्रेष्ठ प्रजाएँ प्रदान करें ॥७,२१.२॥

अनु मन्यतामनुमन्यमानः प्रजावन्तं रयिमक्षीयमाणम् ।
तस्य वयं हेडसि मापि भूम सुमृडीके अस्य सुमतौ स्याम
॥७,२१.३॥

हे अनुमन्ता पुंदेव ! आप हम पर क्रोधित न हों, बल्कि सुखदायक बुद्धि से हमें पुत्रादि एवं अक्षय धन प्रदान करने का अनुग्रह करें ॥७,२१.३॥

यत्ते नाम सुहवं सुप्रणीतेऽनुमते अनुमतं सुदानु ।
तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम्
॥७,२१.४॥

हे धनदात्री अनुमति देवि उत्तम नीति वाली, आवाहन करने योग्य, अभिमत फलदायिनी आप हमारे यज्ञ को पूर्णता तक पहुँचाएँ ।हे वरणीय सौभाग्यशाली देवि ! आप हमें उत्तम वीरों सहित श्रेष्ठ धन प्रदान करें ॥७,२१.४॥

एमं यज्ञमनुमतिर्जगाम सुक्षेत्रतायै सुवीरतायै सुजातम् ।
भद्रा ह्यस्याः प्रमतिर्बभूव सेमं यज्ञमवतु देवगोपा ॥७,२१.५॥

हे अनुमति देवि ! आप, हमारे इस विधिवत् सम्पन्न होने वाले यज्ञ की रक्षा करते हुए, सुक्षेत्र पुत्रादि फल देने के लिए पधारें । हे देवि ! आपकी कृपा से ही श्रेष्ठ कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त होती है ॥७,२१.५॥

अनुमतिः सर्वमिदं बभूव यत्तिष्ठति चरति यदु च विश्वमेजति ।
तस्यास्ते देवि सुमतौ स्यामानुमते अनु हि मंससे नः ॥७,२१.६॥

हे अनुमति देवि ! इस चराचर जगत् में, अबुद्धिपूर्वक कार्य करने वालों एवं सुबुद्धिपूर्वक कार्य करने वालों में अनुमति रूप से संव्याप्त आप हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें ॥७,२१.६॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २२ – एको विभुः सूक्त

पुरातन सूर्य की प्रशंसा

समेत विश्वे वचसा पतिं दिव एको विभूरतिथिर्जनानाम् ।
स पूर्व्यो नूतनमाविवासत्तं वर्तनिरनु वावृत एकमित्पुरु ॥७,२२.१॥

हे बन्धुओ ! आप सब द्युलोक के स्वामी सूर्यदेव की स्तुति करें। यह देव नवजात प्राणियों के प्रधान स्वामी हैं एवं अतिथि के समान ही पूजनीय हैं। यह सनातन सूर्यदेव इस पितृभूत नवजात प्राणी को अपना समझ कर इस पर कृपा करें । यह देव अनेक सन्मार्गों के संचालक हैं ॥७,२२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २३ – ज्योति सूक्त

सत्कर्म की प्रेरणा देने के लिए सूर्य देव की स्तुति

अयं सहस्रमा नो दृशे कवीनां मतिर्ज्योतिर्विधर्मणि ॥७,२३.१॥

यह देव सब में आत्मारूप से व्याप्त हैं । यह सवितादेवता हमें सहस्र वर्ष पर्यन्त स्वस्थ जीवनयापन की शक्ति प्रदान करें । ज्ञानियों में मान्य, अनेक सन्मार्गों के संचालक, उत्तम बुद्धि एवं ज्योति रूप स्थित देव हमें सत्कर्म में प्रेरित कर आयु प्रदान करें ॥७,२३.१॥

ब्रध्नः समीचीरुषसः समैरयन् ।
अरेपसः सचेतसः स्वसरे मन्युमत्तमाश्चिते गोः ॥७,२३.२॥

ज्ञानदायिनी, पापनाशनी, तेजस्वी उषाएँ, हमें महान् सवितादेव की ओर प्रेरित करें ॥७,२३.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

२४ – दुवप्ननाशन सूक्त

दुःस्वप्न विनाश की कामना

दौष्वप्न्यं दौर्जीवित्यं रक्षो अभ्वमराय्यः ।
दुर्णाम्नीः सर्वा दुर्वाचस्ता अस्मन् नाशयामसि ॥१॥

दु:स्वप्न आना, दुखीजीवन, हिंसकों के उपद्रव, दरिद्रता, विपत्ति का भय, बुरे नामों का उच्चारण और समस्त प्रकार के दुष्टभाषण आदि दोषों का हम निष्कासन करते हैं ॥७,२४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २५ – सविता सूक्त

सविता व प्रजापति देव की आराधना

यन् न इन्द्रो अखनद्यदग्निर्विश्वे देवा मरुतो यत्स्वर्काः ।
स्मभ्यं सविता सत्यधर्मा प्रजापतिरनुमतिर्नि यच्छात्॥७,२५.१॥

जो फल हमें, इन्द्रदेव, अग्निदेव, विश्वेदेवा एवं मरुद्गण आदि देते हैं, वह फल हमें, सत्यधर्मा-प्रजापति, अनुमति देवी एवं सूर्यदेव प्रदान करें ॥७,२५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २६ – विष्णु सूक्त

विष्णु और वरुण की प्रशंसा

ययोरोजसा स्कभिता रजांसि यौ वीर्यैर्वीरतमा शविष्ठा ।
यौ पत्येते अप्रतीतौ सहोभिर्विष्णुमगन् वरुणं पूर्वहूतिः ॥७,२६.१॥

जिनके बल से लोक-लोकान्तर स्थिर हैं, जो अत्यन्त वीर और शूर हैं, जो अपनी बलपूर्ण चेष्टाओं के द्वारा आगे बढ़ते रहते हैं, उन दोनों विष्णु और वरुणदेव को यह होता हवि प्रदान करता है ॥७,२६.१॥

यस्येदं प्रदिशि यद्विरोचते प्र चानति वि च चष्टे शचीभिः ।
पुरा देवस्य धर्मणा सहोभिर्विष्णुमगन् वरुणं पूर्वहूतिः ॥७,२६.२॥

जिनकी आज्ञा से समस्त जगत् (चौदह भुवन) प्रकाशित हो रहे हैं, उत्तम रीति से प्राण धारण किए हैं एवं अपने धर्मकर्तव्य, बल एवं शक्तियों से देखते हैं, उन विष्णु एवं वरुणदेव को सर्वप्रथम आहूत करके हम हवि अर्पित करते हैं ॥७,२६.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २७ – विष्णु सूक्त

विष्णु के वीरतापूर्ण कर्मों का वर्णन

विष्णोर्नु कं प्रा वोचं वीर्याणि यः पार्थिवानि विममे रजांसि ।
यो अस्कभायदुत्तरं सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः ॥७,२७.१॥

हम सर्वव्यापक विष्णु के सुखवर्द्धक पुरुषार्थ का वर्णन करते हैं। इन्होंने बहुत प्रकार से प्रशंसित, तीन पदों द्वारा पृथ्वीलोक; स्वर्गलोक एवं अंतरिक्षलोक की शोभनीय रचना की एवं सर्वश्रेष्ठ स्वर्गलोक में स्वयं को स्थित किया है ॥७,२७.१॥

प्र तद्विष्णु स्तवते वीर्याणि मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः ।
परावत आ जगम्यात्परस्याः ॥७,२७.२॥

महान् विष्णु के गुणगान करने से उनके दिव्य पराक्रमों का दर्शन होता है । जिस प्रकार विशालकाय सिंह गिरि गुहा

आदि सभी स्थानों में संचार करता हुआ अतिशीघ्र कहीं से कहीं पहुँचने में समर्थ होता है, उसी प्रकारस्मरण मात्र से दूर से दूर रहने वाले विष्णुदेव समीप आ जाते हैं ॥७,२७.२॥

यस्योरुषु त्रिषु विक्रमनेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ।
उरु विष्णो वि क्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि ।
घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर ॥७,२७.३॥

हे भगवन् ! आप तीनों लोकों में विचरण करते हैं। समस्त भुवनों में आपका निवास है । हे देव ! आप हमें भी साधनों सहित निवास दें । हे अग्निरूप विष्णुदेव ! इस यज्ञ में अर्पित घृत को ग्रहण करके प्रसन्न होकर आप यजमान को समृद्धि प्रदान करें ॥७,२७.३॥

इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदा ।
समूढमस्य पंसुरे ॥७,२७.४॥

सर्वव्यापक विष्णुदेव इस जगत् में विचक्रमण (पदन्यास) कर रहे हैं। उन्होंने अपने पाँव को तीन प्रकार से रखा। इनके पाँव में तीनों लोक समा गए ॥७,२७.४॥

त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ।
इतो धर्माणि धारयन् ॥७,२७.५॥

दूसरों के प्रभाव में न आने वाले, रक्षक, व्यापक विष्णु भगवान् ने तीन पाँवों को इस जगत् में रखा है एवं तीनों लोकों को धर्मसहित धारण किया है ॥७,२७.५॥

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे ।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥७,२७.६॥

है लोगो ! आप सब सर्वव्यापक विष्णु भगवान् के कार्य (स्थान) को देखें । जहाँ से यह सब गुण- धर्मों का अवलोकन करते हैं । यह इन्द्रदेव के अच्छे मित्र हैं ॥७,२७.६॥

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।

दिवीव चक्षुराततम् ॥७,२७.७॥

बुद्धिमान् , ज्ञानीजन, भगवान् विष्णु के परमधाम का प्रत्यक्ष दर्शन उसी प्रकार करते हैं, जिस प्रकार द्युलोक में स्थित चक्षुरूप-सूर्यदेव को सब जन देखते हैं ॥७,२७.७॥

दिवो विष्ण उत पृथिव्या महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।
हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैराप्रयच्छ दक्षिणादोत सव्यात्॥७,२७.८॥

हे विष्णुदेव ! चुलोक, भूलोक एवं विस्तृत अन्तरिक्ष से प्रचुर साधन आप अपने दोनों हाथों में भरकर हम सबको प्रदान करें ॥७,२७.८॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २८ – इडा सूक्त

इडा की स्तुति

इडैवास्मामनु वस्तां व्रतेन यस्याः पदे पुनते देवयन्तः ।
घृतपदी शक्करी सोमपृष्ठोप यज्ञमस्थित वैश्वदेवी ॥७,२८.१॥

जिस धेनु के चरणों में, देवताओं के समान आचरण करने वाले यजमान पवित्र होते हैं, वह सोमपृष्ठा, फलदायी सामर्थ्यवाली घृतपदी, समस्त देवताओं से सम्बन्धित इडा (वाणी) हमारे यज्ञ को सर्वत्र प्रकाशित करे । यह धेनु वैसा ही करे, जिससे हमारे कर्म श्रेष्ठ फलदायक हों ॥७,२८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त २९ – स्वस्ति सूक्त

काम में आने वाले उपकरणों की प्रशंसा

वेदः स्वस्तिर्द्रुघणः स्वस्तिः परशुर्वेदिः परशुर्नः स्वस्ति ।
हविष्कृतो यज्ञिया यज्ञकामास्ते देवासो यज्ञमिमं जुषन्ताम्
॥७,२९.१॥

वेद (अथवा दर्भ समूह) हमारा कल्याण करने वाले हों । सुथार के हथियार, लकड़ी काटने वाला कुल्हाड़ा, घास काटने वाली दराँती, गैंड़ासा (फरसा) आदि हमारे लिए कल्याणकारी हों । यह सब हवि बनाने वाले, वजन करने वाले, यजमान का सहयोग करें ॥७,२९.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३० – अग्नाविष्णू सूक्त

अग्नि और विष्णु की स्तति

अग्नाविष्णू महि तद्वां महित्वं पाथो घृतस्य गुह्यस्य नाम ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधानौ प्रति वां जिह्वा घृतमा चरण्यात्॥७,३०.१॥

हे अग्निदेव और विष्णुभगवान् ! एक स्थान में निवास करने वाले आप दोनों देवों की बड़ी महिमा है । आप दोनों देव गुह्य घृत का पान करते हैं । आप यजमानों के घर में सात रत्नों को धारण करते हैं। आप दोनों की दिव्य जिह्वा होमे हुए घृत का रसास्वादन करे ॥७,३०.१॥

अग्नाविष्णू महि धाम प्रियं वां वीथो घृतस्य गुह्या जुषाणौ ।
दमेदमे सुष्टुत्या वावृधानौ प्रति वां जिह्वा घृतमुच्चरण्यात्॥७,३०.२॥

हे अग्निदेव एवं विष्णुभगवान् ! आप दोनों का स्थान अति प्रिय है । आप दोनों गुह्य रस का सेवन करते हैं । आप प्रत्येक घर में स्तुति द्वारा बढ़ते हैं। आप जिह्वा द्वारा गुह्य घृत का रसास्वादन करें ॥७,३०.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३१ – अञ्जन सूक्त

देवों से यज्ञ के यूपों को रंगने की कामना

स्वाक्तं मे द्यावापृथिवी स्वाक्तं मित्रो अकरयम् ।
स्वाक्तं मे ब्रह्मणस्पतिः स्वाक्तं सविता करत्॥७,३१.१॥

द्यावा-पृथिवी, सूर्यदेव, ब्रह्मणस्पति, सविता देवता; यह सभी हमारी आँखों की स्वस्थता के लिए कृपा करके अञ्जन प्रदान करें ॥७,३१.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३२ – शत्रुनाशन सूक्त

धनवान एवं शौर्य संपन्न इंद्र की प्रशंसा

इन्द्रोतिभिर्बहुलाभिर्नो अद्य यावच्छ्रेष्ठाभिर्मघवन् छूर जिन्व ।
यो नो द्वेष्ट्यधर सस्पदीष्ट यमु द्विष्मस्तमु प्राणो जहातु
॥७,३२.१॥

हे इन्द्रदेव ! आप अनेक रक्षा साधनों के द्वारा हमारी रक्षा करें । हे धनवान्, पराक्रमी वीर ! हमसे द्वेष करने वाले को पतन हो और हमारे शत्रु का नाश हो ॥१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३३ – दीर्घायु सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम् ।
अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे ॥७,३३.१॥

हम उन अग्निदेव के पास हवि-अन्न लेकर जाते हैं, जो सर्वप्रिय, स्तुति करने योग्य युवा हैं। वह नम्रतापूर्वक अर्पित की गई हमारी आहुतियों से प्रसन्न होकर हमें दीर्घायुष्य प्रदान करें ॥७,३३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३४ – दीर्घायु सूक्त

मरुत आदि देवगणों से सुखसमृद्धि की कामना

सं मा सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः ।
सं मायमग्निः सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे ॥७,३४.१॥

मरुत् देवता हमें धनसहित प्रजा प्रदान करें । ब्रह्मणस्पति, अग्निदेव एवं पूषादेव हुमको श्रेष्ठ सन्तान और धनादिसहित दीर्घायु प्रदान करें ॥७,३४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३५ – शत्रुनाशन सूक्त

अग्नि देव व अदीना देवमाता की प्रशंसा

अग्ने जातान् प्र णुदा मे सपत्नान् प्रत्यजातान् जातवेदो नुदस्व ।
अधस्पदं कृणुष्व यह पृतन्यवोऽनागसस्ते वयमदितयह स्याम ॥७,३५.१॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे शत्रुओं का विनाश करें । हे जातवेदा अग्ने ! आप भविष्य में होने वाले शत्रुओं का नाश करें । हमसे युद्ध के लिए तत्पर जनों का पतन हो । आपकी कृपा से हम आक्रोश शून्य; निष्पाप रहकर कभीं दीनता को प्राप्त न हों ॥७,३५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३६ – सपत्नीनाशन सूक्त

अग्नि से शत्रओं के विनाश की कामना, विद्वेष करने वाली स्त्री तथा संतान रहित नारी

प्रान्यान्त्सपत्नान्त्सहसा सहस्व प्रत्यजातान् जातवेदो नुदस्व।
इदं राष्ट्रं पिपृहि सौभगाय विश्व एनमनु मदन्तु देवाः ॥७,३६.१॥

हे जातवेद अग्निदेव ! आप हमसे विपरीत आचरण करने वाले शत्रुओं को नष्ट करें । अप्रकट अथवा भविष्य में उत्पन्न होने वाले शत्रुओं का विनाश करें। इस राष्ट्र को समृद्धिशाली एवं सौभाग्यशाली बनाएँ । समस्त देवगण इसका अनुमोदन करें ॥७,३६.१॥

इमा यास्ते शतं हिराः सहस्रं धमनीरुत ।
तासां ते सर्वासामहमश्मना बिलमप्यधाम् ॥७,३६.२॥

हे स्त्री ! हम तुम्हारी सौ नाड़ियों और सहस्र धमनियों के मुख पत्थर से बन्द करते हैं ॥७,३६.२॥

परं योनेरवरं ते कृणोमि मा त्वा प्रजाभि भून् मोत सूतुः ।
अस्वं त्वाप्रजसं कृणोम्यश्मानं ते अपिधानं कृणोमि ॥७,३६.३॥

तुम्हारे गर्भस्थान से परे जो हैं, उन्हें समीप करते हैं। इससे तुम्हें प्राणवान् सन्तान प्राप्त हो । पत्थर को आवरण रूप से स्थित करता हूँ ॥७,३६.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३७ – अञ्जन सूक्त

पत्नी तथा पति का परस्पर अनुरक्त होना

अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम् ।
अन्तः कृष्णुष्व मां हृदि मन इन् नौ सहासति ॥७,३७.१॥

हे पत्नी ! हम दोनों के नेत्रों में परस्पर मधुर (स्नेह) भाव हो। नेत्रों में पवित्रता का अञ्जन रहे । हमारे हृदय और मन एक समान धारणा वाले हों ॥७,३७.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३८ – वास सूक्त

मंत्र से युक्त वस्त्र

अभि त्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा ।
याथाऽसो मम केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन ॥७,३८.१॥

हे स्वामिन् ! आप सदैव मेरे ही होकर रहें । मैंने मनोयोगपूर्वक जो वस्त्र तैयार किया है, उसे आपको अर्पित करके, स्नेह से वशीभूत कर अन्यत्र जाने से रोकती हूँ ॥७,३८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ३९ – केवलपति सूक्त

सौवर्चा नामक जड़ी का वर्णन, पति वशीकरण शंखपुष्पी का वर्णन

इदं खनामि भेषजं मांपश्यमभिरोरुदम् ।
परायतो निवर्तनमायतः प्रतिनन्दनम् ॥७,३९.१॥

मैं इस औषधि को खोदती हैं । यह औषधि पति को अनुकूल बनाने में समर्थ है। यह पति को अन्यत्र भटकने से रोकती हैं। इससे दाम्पत्य जीवन आनन्दमय व्यतीत होता है ॥७,३९.१॥

यहना निचक्र आसुरीन्द्रं देवेभ्यस्परि ।
तेना नि कुर्वे त्वामहं यथा तेऽसानि सुप्रिया ॥७,३९.२॥

इस आसुरी नामक औषधि अथवा पदार्थ शक्ति के द्वारा इन्द्रदेव समस्त देवताओं से अधिक प्रभावशाली बने ।

इसके द्वारा मैं अपने पति को अधिक प्रभावशाली बनाकर, उनकी सहधर्मिणी बनकर प्रगति करूंगी ॥७,३९.२॥

प्रतीची सोममसि प्रतीची उत सूर्यम् ।
प्रतीची विश्वान् देवान् तां त्वाछावदामसि ॥७,३९.३॥

हे शंखपुष्पी औषधे ! सोम, सूर्य एवं समस्त देवताओं को सम्मुख करने के लिए आपके सहयोग की अपेक्षा करती हूँ ॥७,३९.३॥

अहं वदामि नेत्त्वं सभायामह त्वं वद ।
ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन ॥७,३९.४॥

हे स्वामिन् ! सभा में भले ही केवल आप बोलें, पर घर में मैं भी बोलँगी, उसे सुनकर आप अनुमोदन करें । आप सदैव मेरे ही रहें, अन्य का नाम भी न लें ॥७,३९.४॥

यदि वासि तिरोजनं यदि वा नद्यस्तिरःि ।
इयं ह मह्यं त्वामोषधिर्बद्ध्वेव न्यानयत्॥७,३९.५॥

हे स्वामिन् ! यदि आपको कहीं वन आदि में जाना पड़े अथवा नदी के पार जाएँ, तब भी यह औषधि आपको आबद्ध करके मेरे सम्मुख करे ॥७,३९.५॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४० – आपः सूक्त

सारस्वत देव की प्रशंसा

दिव्यं सुपर्णं पयसं बृहन्तमपां गर्भं वृषभमोषधीनाम् ।
अभीपतो वृष्ट्या तर्पयन्तमा नो गोष्ठे रयिष्ठां स्थापयाति
॥७,४०.१॥

औषधियों को बढ़ाने वाले, जल के मध्य विश्व को तृप्त करने वाले, शोभन मन वाले, वर्षा के द्वारा प्राणियों को तृप्त करने वाले सरस्वान्देव को इन्द्रदेव हमारे गोष्ठ में स्थापित करें ॥
॥७,४०.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४१ – सरस्वान् सूक्त

सरस्वान देवी की स्तुति

यस्य व्रतं पशवो यन्ति सर्वे यस्य व्रत उपतिष्ठन्त आपः ।
यस्य व्रते पुष्टपतिर्निविष्टस्तं सरस्वन्तमवसे हवामहे ॥७,४१.१॥

जिन सरस्वान् देवता के कर्मों का समस्त पशु अनुगमन करते हैं एवं सभी जल परस्पर मिलते हैं, वृष्टि एवं पुष्टि जिनके अधीन हैं, जिनके कर्मों में समस्त वस्तुओं के पोषणपति निविष्ट हैं, रक्षा एवं तृप्ति के लिए हमें उन सरस्वान् देव का आवाहन करते हैं ॥७,४१.१॥

आ प्रत्यञ्चं दाशुषे दाश्वंसं सरस्वन्तं पुष्टपतिं रयिष्ठाम् ।
रायस्पोषं श्रवस्युं वसाना इह सदनं रयीणाम् ॥७,४१.२॥

पुष्टि के स्वामी, धन स्थान में स्थित धन के स्वामी, यजमानों को अन्न देने की इच्छा वाले हविदाता से प्रसन्न हों ।उनके अभिमुख होकर कामनाओं की पूर्ति करने वाले सरस्वान् की, हम हवि द्वारा सेवा करते हुए बुलाते हैं ॥७,४१.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४२ – सुपर्ण सूक्त

सूर्य और इंद्र की स्तुति

अति धन्वान्यत्यपस्ततर्द श्येनो नृचक्षा अवसानदर्शः ।
तरन् विश्वान्यवरा रजंसीन्द्रेण सख्या शिव आ जगम्यात्॥७,४२.१॥

समस्त प्राणियों के कर्मों के साक्षी, प्रशंसनीय गति वाले, अनन्त द्युलोक में दीखने वाले, मरुस्थलों में कृपा करके वर्षा करने वाले सूर्यदेव अपने मित्र इन्द्रदेव को द्युलोक से नीचे के लोकों का अतिक्रमण कर, हमारे नवीन घर बनाने के स्थल में लाएँ ॥७,४२.१॥

श्येनो नृचक्षा दिव्यः सुपर्णः सहस्रपाच्छतयोनिर्वयोधाः ।
स नो नि यच्छाद्वसु यत्पराभृतमस्माकमस्तु पितृषु स्वधावत्॥७,४२.२॥

अनन्त किरणों वाले, अपरिमित कर्मफलों वाले, सुन्दर गति वाले, अन्न को धारण करने वाले सूर्यदेव हमें चिरस्थायी करें । हमारे द्वारा अर्पित धन अथवा हवि पितरों के लिए स्वधारूप (तृप्तिदायक) हो ॥७,४२.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४३ – पापमोचन सूक्त

अमीवा नामक रोग के लिए सोम एवं रुद्र देव की प्रार्थना

सोमारुद्रा वि वृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
बाधेथां दूरं निर्ऋतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुक्तमस्मत्॥१॥

हे सोम और रुद्रदेव ! आप विधूचिका रोग एवं अमीवा रोग को हमारे घर से नष्ट करें । हमारे कृत पापों एवं रोग की कारणभूत पिशाचिनी को दूर ले जाकर नष्ट करें ॥७,४३.१॥

सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मद्विश्वा तनूषु भेषजानि धत्तम् ।
अव स्यतं मुञ्चतं यन् नो असत्तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत्॥२॥

हे सोम एवं रुद्रगण ! आप हमारे शरीरों में रोगनाशक औषधियों को स्थापित करें , एवं शरीरों में व्याप्त पापों को हमसे अलग करके उन्हें नष्ट करें ॥७,४३.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४४ – वाक् सूक्त

वाणियों के रूप

शिवास्त एका अशिवास्त एकाः सर्वा बिभर्षि सुमनस्यमानः। तिस्रो वाचो निहिता अन्तरस्मिन् तासामेका वि पपातानु घोषम् ॥७,४४.१॥

हे वाक्देव ! आपके कुछ शब्द कल्याणकारी-शुभ और कुछ अकल्याणकारी-अशुभ होते हैं, श्रेष्ठ मन वाले आप दोनों प्रकार की वाणियों को धारण करें । उच्चारण करने वाले के अन्दर, वाणी के तीन प्रकार या भाग (परा, पश्यन्ती एवं मध्यमा) रहते हैं, जबकि श्रोता के पास चौथाई भाग (बैखरी) व्यक्त होकर पहुँचता है ॥७,४४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४५ – इन्द्राविष्णू सूक्त

इंद्र और विष्णु की आराधना

उभा जिग्यथुर्न परा जयहथे न परा जिग्ये कतरश्चनैनयोः ।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयहथाम्
॥७,४५.१॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप दोनों सदैव अजेय हैं। आपमें से एक भी कभी पराजित नहीं हुए। हे देव ! जब आए दोनों स्पर्धा से युद्ध करते हैं, तब हजारों शत्रुओं को तीन प्रकार से हरा देते हैं और इच्छित वस्तु (लोक, वेद या वाणी) को अपने वश में कर लेते हैं ॥७,४५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४६ – ईर्ष्या निवारण सूक्त

सक्तुमंथ नामक जड़ीबूटी का वर्णन

जनाद्विश्वजनीनात्सिन्धुतस्पर्याभृतम् ।
दूरात्त्वा मन्य उद्भृतमीर्ष्याया नाम भेषजम् ॥७,४६.१॥

सम्पूर्ण मानवों के लिए हितकारी जनपद से तथा समुद्र से अथवा दूर से लाई गई औषधि ईर्ष्या तथा क्रोध हटाने में समर्थ है ॥१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४७ – ईर्ष्या निवारण सूक्त

ईर्ष्या को शांत करने के लिए आग्रह

अग्नेरिवास्य दहतो दावस्य दहतः पृथक्।
एतामेतस्येर्ष्यामुद्राग्निमिव शमय ॥७,४७.१॥

हे ईर्ष्या निवारण करने वाले देव ! आप अग्निदेव के समान हमारे सब कार्यों को भस्म करें एवं ईर्ष्यालु पुरुष की ईर्ष्या को उसी प्रकार शान्त करें, जिस प्रकार जल के द्वारा अग्नि को शान्त करते हैं ॥१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४८ – सिनीवाली सूक्त

सिनीवाली की प्रशंसा

सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥७,४८.१॥

हे सिनीवालि ! आप अनेकों द्वारा स्तुत्य हैं । आप देवताओं की भगिनीरूप ही हैं, ऐसे महान् गुणों वाली हे देवि ! आप हमारे द्वारा अर्पित हवि को ग्रहण करें एवं प्रसन्न होकर पुत्रादि प्रजा प्रदान करें ॥१॥

या सुबाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुसूवरी ।
तस्यै विश्पत्न्यै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन ॥७,४८.२॥

हे ऋत्विज् और यजमानो ! जो सिनीवाली देवी सुन्दर बाहु, सुन्दर अँगुलियों एवं अंग- सौष्ठव से सुशोभित होने वाली हैं,

आप उन उत्तम सन्तान देने वाली देवी को हवि अर्पित करें ॥२॥

या विश्पत्नीन्द्रमसि प्रतीची सहस्रस्तुकाभियन्ती देवी ।
विष्णोः पत्नि तुभ्यं राता हवींषि पतिं देवि राधसे चोदयस्व
॥७,४८.३॥

हे प्रजापालिका सिनीवाली देवि ! आप परम ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्रदेव के सामने जाती हैं, उनकी पूजा करती हैं । हजारों लोगों से स्तुत्य,हे व्यापनशील देव की पत्नी ! हम आपके लिए हवि अर्पित करते हैं, आप प्रसन्न होकरअपने पति इन्द्रदेव द्वारा धन प्रदान कराएँ ॥३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ४९ – कुहू सूक्त

कुह की प्रशंसा

कुहूं देवीं सुकृतं विद्मनापसमस्मिन् यज्ञे सुहवा जोहवीमि ।
सा नो रयिं विश्ववारं नि यछाद्दातु वीरं शतदायमुक्थ्यम् ॥७,४९.१॥

कुहू देवी उत्तमकर्म वाली, ज्ञानपूर्वक कर्म करने वाली तथा स्तुति करने योग्य हैं। ऐसी दिव्य शक्ति सम्पन्न देवी का हम इस यज्ञ में आवाहन करते हैं। वह प्रसन्न होकर हमें श्रेष्ठ धन एवं सैकड़ों प्रकार से दान करने वाले वीर पुत्र प्रदान करें ॥१॥

कुहूर्देवाना ममृतस्य पत्नी हव्या नो अस्य हविषो जुषेत ।
शृनोतु यज्ञमुशती नो अद्य रायस्पोषं चिकितुषी दधातु ॥७,४९.२॥

देवताओं में जो अमृतरूप हैं, कुहू देवी उनकी पत्नी (पालन करने वाली) हैं। आवाहन करने योग्य देवी हमारे इस यज्ञ में आकर हवि ग्रहण करें । हमें धनादि से पुष्ट करें ॥२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५० – राका सूक्त

शोभित व शोभन स्तुति वाली पूर्णिमा का आह्वान

राकामहं सुहवा सुष्टुती हुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना।
सीव्यत्वपः सूच्याछिद्यमानया ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम्
॥७,५०.१॥

उन पूर्ण चन्द्रमा के सामन आह्लाददायिनी, स्तुति करने योग्य देवी का हम उत्तम ढंग से आवाहन करते हैं। वह सौभाग्यशालिनी देवी अपनी सुई एवं सीने की विशेष क्रिया के दिव्य प्रभाव से हमें सैकड़ों प्रकार के दान देने में समर्थ यशस्वी वीर पुत्र प्रदान करें ॥१॥

यास्ते राके सुमतयः सुपेशसो याभिर्ददासि दाशुषे वसूनि ।
ताभिर्नो अद्य सुमना उपागहि सहस्रापोषं सुभगे ररााणा
॥७,५०.२॥

हे राका देवि ! आप उत्तम सुन्दर सुमतियों के द्वारा हवि दाता यजमान को कल्याणकारी धन देती हैं। आज उन्हीं सुमतियों सहित, प्रसन्न मन होकर आएँ और हमें श्रेष्ठ धन से पुष्ट करें ॥२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५१ – देवपत्नी सूक्त

सुख के लिए देव पत्नियों की स्तुति

देवानां पत्नीरुशतीरवन्तु नः प्रावन्तु नस्तुजयह वाजसातयह ।
याः पार्थिवासो या अपामपि व्रते ता नो देवीः सुहवाः शर्म यछन्तु ॥७,५१.१॥

देवपत्नियाँ हमारी रक्षा के लिए कृपा करके हमारे निकट आएँ एवं लाभ प्राप्त कराने की इच्छा से अन्न प्रदान करें । जो देवियाँ पृथ्वी पर, जो जलवृष्टि के लिए अन्तरिक्ष में निवास करती हैं, वह सब हमको सुख प्रदान करें ॥७,५१.१॥

उत ग्ना व्यन्तु देवपत्नीरिन्द्राण्यग्नाय्यश्विनी राट्।
आ रोदसी वरुनानी शृणोतु व्यन्तु देवीर्य ऋतुर्जनीनाम् ॥७,५१.२॥

देवताओं की पत्नियाँ यह देवियाँ हमारा कल्याण करें । इन्द्राणी, वरुणानी, रोदसी (द्यावा-पृथिवी) तथा अश्विनीकुमारों की पत्नी 'रा' हमारी प्रार्थना सुनें । स्त्रियों के तुकाल में यह देवियाँ हमारा हित करें ॥७,५१.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५२ – विजय सूक्त

अग्नि की स्तुति , जुआरियों का वध , जुआरियों को जीतने के लिए इंद्र से प्रार्थना, इंद्र की प्रशंसा तथा विजय के लिए पासों की पूजा

यथा वृक्षमशनिर्विश्वाहा हन्त्यप्रति ।
एवाहमद्य कितवान् अक्षैर्बध्यासमप्रति ॥७,५२.१॥

जिस प्रकार विद्युत् अग्नि नित्य प्रति वृक्षों को भस्म करती है, उसी प्रकार हम सभी जुआरियों को पाँसों के द्वारा अतुलनीय रीति से मारते हैं ॥७,५२.१॥

तुराणामतुराणां विशामवर्जुषीणाम् ।
समैतु विश्वतो भगो अन्तर्हस्तं कृतं मम ॥७,५२.२॥

द्यूतकर्म (जुए) में शीघ्रता वाले तथा देर करने वालों में मैं प्रधान हूँ । द्यूतकर्म न छोड़ने वालों को ऐश्वर्य, धन आदि मुझ पाँसों को प्राप्त हो ॥७,५२.२॥

रथैरिव प्र भरे वाजयद्भिः प्रदक्षिणं मरुतां स्तोममृध्याम् ॥७,५२.३॥

हम उन स्वावसु अग्निदेव की स्तुति करते हैं, जो स्तुतिकर्ताओं को अपना धन प्रदान करते हैं। वह देव प्रसन्न होकर हमें कृत नामक पाँसे (श्रेष्ठ संकल्प या कमी प्रदान करें। जिस प्रकार रथ में अन्न लाते हैं, उसी प्रकार सत्कर्म द्वारा शत्रुओं के धन को भी प्राप्त करें ॥७,५२.३॥

वयं जयहम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदव भरेभरे ।
अस्मभ्यमिन्द्र वरीयः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज ॥७,५२.४॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपकी सहायता से घेरने वाले शत्रुओं को जीतें । प्रत्येक युद्ध में आप हमारे प्रयत्नों को सुरक्षित रखें । हमारे प्रगति मार्ग में बाधक शत्रुओं के बलों को नष्ट करें । हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप हमें वरिष्ठ स्थान तक पहुँचाकर धन प्रदान करें ॥७,५२.४॥

अजैषं त्वा संलिखितमजैषमुत संरुधम् ।
अविं वृको यथा मथदेवा मथ्नामि ते कृतम् ॥५॥

हे हर प्रकार से पीड़ा देने वाले शत्रु ! हम तुझे जीत लेंगें । जिस प्रकार भेड़िया भेड़ को मथ कर मार देता हैं, उसी प्रकार हम तम्हारे कृत (पाँसों) को मथकर नष्ट कर देंगे ॥७,५२.५॥

उत प्रहामतिदीवा जयति कृतमिव श्वघ्नी वि चिनोति काले ।
यो देवकामो न धनं रुणद्धि समित्तं रायः सृजति स्वधाभिः ॥७,५२.६॥

विजयाभिलाषी वीर अपने घातक शत्रुओं को जोत लेता है । स्वयं के धन आदि का हनन करने वाला मूढ़ वास्तव में अपने कृत कर्मों का फल ही भोगता हैं । जो व्यक्ति संग्रह न करके देव कार्यो में धन नियोजित करता है, उस व्यक्ति को ही विशिष्ट धन को प्राप्ति होती है ॥७,५२.६॥

गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन वा क्षुधं पुरुहूत विश्वे ।

वयं राजसु प्रथमा धनान्यरिष्टासो वृजनीभिर्जयहम ॥७,५२.७॥

हे इन्द्रदेव ! हम दुर्गति वाली दरिद्रता से उत्पन्न दुर्मति को गौ आदि पशुधन द्वारा दूर करें, यव आदि के द्वारा क्षुधा को शान्त करें हम प्रकाशवानो। प्रतिभावानों } में श्रेष्ठ रहें एवं अपनी शक्तियों के द्वारा धन प्राप्त करें ॥७,५२.७॥

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः ।
गोजिद्भूयासमश्वजिद्धनंजयो हिरण्यजित्॥७,५२.८॥

हमारे दाहिने हाथ में कृत (कर्म) एवं बायें हाथ में विजय है । इन दोनों से हम गौ, अश्व, धन, भूमि एवं स्वर्ण आदि प्राप्त करने में सफल हो ॥७,५२.८॥

अक्षाः फलवतीं द्युवं दत्त गां क्षीरिणीमिव ।
सं मा कृतस्य धारया धनुः स्नाव्नेव नह्यत ॥७,५२.९॥

हमें दुग्ध देने वाली गौ जैसी फलदायी विजय हेतु अक्ष (पाँसे या पुरुषार्थ) प्राप्त हों । जिस प्रकार धनुष प्रत्यञ्चा (डोरी) से

युक्त होने पर विजय दिलाने वाला होता है, उसी प्रकार आप हमें पुरुषार्थ से संयुक्त कर श्रेष्ठ फल प्रदान करे ॥९॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५३ – परिपाण सूक्त

शत्रु से रक्षा के लिए बृहस्पति एवं इन्द्र स की प्रशंसा

बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघयोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरीयः कृणोतु ॥७,५३.१॥

बृहस्पतिदेव, ऊपर-नीचे एवं पिछले भाग से हमारी रक्षा करें, इन्द्रदेव पूर्व और मध्य भाग से हमारी रक्षा करें एवं सखारूप इन्द्रदेव अपने स्तोताओं को मित्र भाव से धन आदि प्रदान कर श्रेष्ठ बनाएँ ॥७,५३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५४ – सांमनस्य सूक्त

आपस में सौमनस्य के लिए अश्विनीकुमारों की आराधना

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः ।
संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् ॥७,५४.१॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम स्वजनों सहित समान ज्ञान वाले हों। हमसे प्रतिकूल बात करने वाले भी हमारे साथ अनुकूल बुद्धि वाले हों । हे अश्विनीकुमार देवो ! आप कृपा कर हम सब में, इस विषय में सुमति स्थापित करें ॥७,५४.१॥

सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन ।
मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेषुः पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते
॥७,५४.२॥

हम मन से श्रेष्ठज्ञान प्राप्त करें । ज्ञानवान् होकर, एक मत से; बिना परस्पर विरोध किए, हम कार्य करें । देवताओं से

प्रेम करने वाले हम कभी अलग न हों । परस्पर हमारी वाणी विषादकारक न हो। भविष्य में इन्द्रदेव का वज्र हम पर न गिरे ॥७,५४.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५५ – दीर्घायु सूक्त

बृहस्पति, अग्नि और अश्विनी कुमारों की स्तुति प्राण और अपान वायु से आयु की कामना तथा स्वर्ग में आरोहण

अमुत्रभूयादधि यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः ।
प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मद्देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ॥७,५५.१॥

हे अग्निदेव एवं बृहस्पतिदेव ! आप दोनों परलोक में मिलने वाली यातनाओं से इसे मुक्ते करें एवं आपकी कृपा से दोनों अश्विनीकुमारदेव इसे मृत्युकारक रोगों से बचाएँ ॥७,५५.१॥

सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम् ।
शतं जीव शरदो वर्धमानोऽग्निष्टे गोपा अधिपा वसिष्ठः ॥७,५५.२॥

हे प्राण एवं अपान ! आप दोनों इस मनुष्य को छोड़े नहीं, बल्कि (इसमें) भली प्रकार संचरित हों । है पुरुष ! प्राण-अपान तुम्हारी देह में संचार करते रहें, जिससे वर्धमान होकर तुम सौ वर्ष तक जीवित रहो । तेजस्वी अग्निदेव तुम्हारी रक्षा करें ॥७,५५.२॥

आयुर्यत्ते अतिहितं पराचैरपानः प्राणः पुनरा ताविताम् ।
अग्निष्टदाहार्निर्ऋतेरुपस्थात्तदात्मनि पुनरा वेशयामि ते ॥७,५५.३॥

हे आयु की कामना वाले पुरुष ! स्वास्थ्य विरोधी आचरणों के कारण, जो तेरी आयु क्षीण हो गई है, उसे प्राण-अपान फिर से बढ़ाएँ । यज्ञ द्वारा प्रसन्न अग्निदेव तुम्हें सुरक्षित रखें एवं दीर्घायु प्रदान करें ॥७,५५.३॥

मेमं प्राणो हासीन् मो अपानोऽवहाय परा गात्।
सप्तर्षिभ्य एनं परि ददामि ते एनं स्वस्ति जरसे वहन्तु ॥४॥

इस मनुष्य को प्राण-अपान छोड़कर न जाएँ। हम इस आयु की कामना वाले पुरुष को सप्त ऋषियों की शरण में पहुँचाते हैं, वह इसे वृद्धावस्था तक सुखपूर्वक रखें ॥७,५५.४॥

प्र विषतं प्राणापानावनड्वाहाविव व्रजम् ।
अयं जरिम्नः शेवधिररिष्ट इह वर्धताम् ॥७,५५.५॥

हे प्राण-अपान !आप दोनों इस आयु की कामना वाले पुरुष के शरीर में वैसे ही भ्रमण करते रहें, जैसे गोशाला में बैल प्रविष्ट होकर घूमते रहते हैं। यह बिना किसी बाधा के वृद्धावस्था तक सुखपूर्वक जीवनयापन करे ॥७,५५.५॥

आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते ।
आयुर्नो विश्वतो दधदयमग्निर्वरिण्यः ॥७,५५.६॥

हे आयु की कामना वाले पुरुष ! हम तुम्हारे क्षयरोग को दूर हटाते हुए, तुम्हें दीर्घजीवी बनाने के लिए अग्निदेव से प्रार्थना करते हैं ॥७,५५.६॥

उद्वयं तमसस्परि रोहन्तो नाकमुत्तमम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥७,५५.७॥

तमस् क्षेत्र को पार करके, श्रेष्-स्वर्ग में चढ़ते हुए हम, सबके उत्पादक तेजस्वी सूर्यदेव को प्राप्त करें ॥७,५५.७॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५६ – विघ्नशमन सूक्त

इंद्र से सुख की कामना

ऋचं साम यजामहे याभ्यां कर्माणि कुर्वते ।
एते सदसि राजतो यज्ञं देवेषु यछतः ॥७,५६.१॥

हम पढ़े हुए ऋक् और यजु का हवि द्वारा पूजन करते हैं। हम ऋत्विज् -यजमान ऋचाओं और सामों के द्वारा यजन करते हैं । यह दोनों यज्ञशाला में दमकते हुए सुशोभित होते हैं ।यही देवताओं तक यज्ञ को पहुँचाते हैं॥७,५६.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५७ – मार्गस्वस्त्य अयन सूक्त

ऋग्वेद और सामवेद का पूजन

ऋचं साम यदप्राक्षं हविरोजो यजुर्बलम् ।
एष मा तस्मान् मा हिंसीद्वेदः पृष्टः शचीपते ॥७,५७.१॥

जिस प्रकार हमने ऋग्वेद के द्वारा वि, सामवेद से ओज और यजुर्वेद से बल को जाना है ।(हे इन्द्रदेव !) यह पूछकर जाना हुआ वेदज्ञान हमें पीड़ा न पहुँचाए, प्रत्युत इच्छित फल प्रदान करे ॥७,५७.१॥

यह ते पन्थानोऽव दिवो यहभिर्विश्वमैरयः ।
तेभिः सुम्नया धेहि नो वसो ॥७,५७.२॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने द्युलोक के अधोभाग वाले मार्गों के द्वारा जगत् को (प्राणियों को) अपने-अपने कर्म में

नियोजित करते हैं । आप उन्हीं मार्गों से हमें सुखरहित पुष्टि प्रदान करें ॥७,५७.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५८ – विषभेषज्य सूक्त

मधु नामक जड़ीबूटी का वर्णन, सर्प का विष निकालना, शर्कोटक सर्प के टुकड़े, परपीड़ादायक बिच्छु तथा विषनाशक जड़ीबूटी का वर्णन

तिरश्चिराजेरसितात्पृदाकोः परि संभृतम् ।
तत्कङ्कपर्वणो विषमियं वीरुदनीनशत्॥७,५८.१॥

तिरछी रेखाओं वाले, काले, फुफकारने वाले सर्प के विष को तथा कंकपर्वा नामक प्राणी-विष को यह 'मधुक' नामक औषधि नष्ट करती है ॥७,५८.१॥

इयं वीरुन् मधुजाता मधुश्चुन् मधुला मधूः ।
सा विह्रुतस्य भेषज्यथो मशकजम्भनी ॥७,५८.२॥

यह प्रयुक्त औषधि मधु से निष्पन्न हुई है । यह मधुर रस बढ़ाने वाली है। यह काटने वाले प्राणियों एवं उनके विष को नष्ट करने में समर्थ है ॥७,५८.२॥

यतो दष्टं यतो धीतं ततस्ते निर्ह्वयामसि ।
अर्भस्य तृप्रदंशिनो मशकस्यारसं विषम् ॥७,५८.३॥

जहाँ काटा है और रक्त पिया है, उस स्थान से तीव्रर्दशन करने वाले मच्छर के विष को हम नष्ट करते हैं ॥७,५८.३॥

अयं यो वक्रो विपरुर्व्यङ्गो मुखानि वक्रा वृजिना कृणोषि ।
तानि त्वं ब्रह्मणस्पते इषीकामिव सं नमः ॥७,५८.४॥

विष के प्रभाव से रोगी अंग सिकोड़ रहा है, ढीली संधियों वाला हो गया है, मुख को टेढ़ा-मेढ़ा कर रहा है, ऐसे रोगी को इस औषधि द्वारा स्वस्थ करते हैं ॥७,५८.४॥

अरसस्य शर्कोटस्य नीचीनस्योपसर्पतः ।
विषं ह्यस्यादिष्यथो एनमजीजभम् ॥७,५८.५॥

निर्बल दिखने वाले, रेंगकर चलने वाले इस शर्कोटक (इस नाम वाले या विष से टेढ़ा कर देने वाले) जन्तु के विष को हमने नष्ट कर दिया है ॥७,५८.५॥

न ते बाह्वोर्बलमस्ति न शीर्षे नोत मध्यतः ।
अथ किं पापयाऽमुया पुछे बिभर्ष्यर्भकम् ॥७,५८.६॥

हे बिच्छु ! तेरी बाहुओं में, सिर में और मध्य भाग में कष्ट देने की सामर्थ्य नहीं है। केवल पूँछ में थोड़ा विष है, फिर तू दुर्बुद्धि के वशीभूत होकर दूसरों को कष्ट देने की इच्छा से क्या फिरता है? ॥७,५८.६॥

अदन्ति त्वा पिपीलिका वि वृश्चन्ति मयूर्यः ।
सर्वे भल ब्रवाथ शार्कोटमरसं विषम् ॥७,५८.७॥

हे सर्प ! तुझे चीटियाँ खा लेती हैं और मोरनी भी तेरे टुकड़े-टुकड़े कर डालती हैं । हे विषनाशक औषधे ! तुम शर्कोटक को विष विहीन कर दो ॥७,५८.७॥

य उभाभ्यां प्रहरसि पुछेन चास्येन च ।

आस्ये न ते विषं किमु ते पुछधावसत्॥७,५८.८॥

तुम्हारी पूँछ में ही थोड़ा सा विष है, फिर भी तू पूँछ और मुँखें इन दोनों से ही आघात करता है ॥७,५८.८॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ५९ – सरस्वती सूक्त

देवी सरस्वती की स्तुति

यदाशसा वदतो मे विचुक्षुभे यद्याचमानस्य चरतो जनामनु ।
यदात्मनि तन्वो मे विरिष्टं सरस्वती तदा पृणद्घृतेन ॥७,५९.१॥

मेरे जिन अंगों को याचित वस्तु के न प्राप्त होने से कष्ट हुआ है और इससे मुझमें जो आत्म-ग्लानि या हीनता के भाव आए, उन सबको देवी सरस्वती स्नेहपूर्वक दूर करें ॥७,५९.१॥

सप्त क्षरन्ति सिशवे मरुत्वते पित्रे पुत्रासो अप्यवीवृतन्न् ऋतानि ।
उभे इदस्योभे अस्य राजत उभे यतेते उभे अस्य पुष्यतः ॥७,५९.२॥

मरुत्वान् (प्राणवान्) शिशु के लिए सात दिव्य प्रवाह रस प्रदान करते हैं। जिस प्रकार पुत्र अपने पिता की सत्कर्मो से सेवा करता है, उसी प्रकार यह शिशु की सेवा करते हैं। इसके पास दो शक्तियाँ हैं, जो इसके तेज को बढ़ाती, कार्य कराती और पोषण करती हैं ॥७,५९.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६०- अन्न सूक्त

सोमरस की प्रार्थना सोमरस पीने के लिए इंद्र और वरुण का आह्वान

इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रतौ ।
युवो रथो अध्वरो देववीतयह प्रति स्वसरमुप यातु पीतयह
॥७,६०.१॥

हे सोमपान करने वाले कर्मधारी इन्द्र और वरुणदेव ! आप दोनों इस निचोड़े गए हर्षवर्द्धक सोम का पान करें। इस हेतु आपका अपराजेय रथ, आप दोनों को देवत्व की कामना वाले यजमान के घर के निकट लाए ॥७,६०.१॥

इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ।
इदं वामन्धः परिषिक्तमासद्यास्मिन् बर्हिषि मादयहथाम्
॥७,६०.२॥

हे वरुण और इन्द्रदेव ! आप दोनों अभिलषित फलों की वर्षा करने वाले हैं। आपके लिए परम-मधुर सोमभाग अन्न रूप 'चमस' आदि पात्रों में रखा हुआ है ।आप इस बिछाए गए कुश के आसन पर बैठकर तृप्त हों॥७,६०.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६१ – शापमोचन सूक्त

निंदा करने वाले शत्रु का विनाश

यो नः शपादशपतः शपतो यश्च नः शपात्।
वृक्ष इव विद्युता हत आ मूलादनु शुष्यतु ॥७,६१.१॥

जो उलाहना न देने वाले मुझको शापित करे एवं कठोर वाक्यों द्वारा हमारी निन्दा करे, वह उसी प्रकार नष्ट हो जाए, जिस प्रकार बिजली से आहत हुआ वृक्ष मूल सहित सूख जाता है ॥७,६१.१॥

सूक्त ६२ – रम्यगृह सूक्त

घरों की स्तुति, घरों में सौमनस्य, घरों के धनधान्य, पशुधन से परिपूर्ण होंने की कामना

ऊर्जं बिभ्रद्वसुवनिः सुमेधा अघोरेण चक्षुषा मित्रियहण ।
गृहान् ऐमि सुमना वन्दमानो रमध्वं मा बिभीत मत्॥७,६२.१॥

अन्न धारण करने वाला, धन का दान करने वाला, श्रेष्ठबुद्धि वाला, शान्त मन वाला होकर सबके प्रति मित्र भाव रखता हुआ, समस्त वन्दनीय जनों आदि का वन्दन करता हुआ, मैं अपने घर के पास पहुँच रहा हूँ (या घर में प्रवेश कर रहा हूँ), यहाँ सब लोग मुझसे निर्भय होकर आनन्द से रहें ॥७,६२.१॥

इमे गृहा मयोभुव ऊर्जस्वन्तः पयस्वन्तः ।
पूर्णा वामेन तिष्ठन्तस्ते नो जानन्त्वायतः ॥७,६२.२॥

यह हमारे घर में सुख देने वाले, बलदायक अन्न एवं दुग्ध आदि से युक्त रहें । प्रवास से लौटने पर यह हम स्वामियों को भूलें नहीं ॥७,६२.२॥

यहषामध्येति प्रवसन् यहषु सौमनसो बहुः ।
गृहान् उप ह्वयामहे ते नो जानन्त्वायतः ॥७,६२.३॥

इन घरों में रहते हुए हमें सुखानुभूति हो । घरों में हम अपने इष्ट-मित्रों को बुलाते हैं, हम सब आनन्द से रहें ॥७,६२.३॥

उपहूता भूरिधनाः सखायः स्वादुसंमुदः ।
अक्षुध्या अतृष्या स्त गृहा मास्मद्बिभीतन ॥७,६२.४॥

हे गृहो ! आप धन- सम्पन्न रहें । आप मधुर पदार्थों से युक्त रहते हुए, हमारे मित्र बने रहें । औप में निवास करने वाले व्यक्ति भूख और प्यास से पीड़ित न रहें । हे गृहो ! परदेश से लौटते हुए हमसे तुम डरो नहीं ॥७,६२.४॥

उपहूता इह गाव उपहूता अजावयः ।
अथो अन्नस्य कीलाल उपहूतो गृहेषु ॥७,६२.५॥

हमारे घरों में गौएँ, भेड़-बकरियाँ और सब प्रकार सत्ववाला अन्न रहे, कोई कमी न रहे ॥७,६२.५॥

सूनृतावन्तः सुभगा इरावन्तो हसामुदाः ।
अतृष्या अक्षुध्या स्त गृहा मास्मद्बिभीतन ॥७,६२.६॥

हे गृहो ! तुम सत्ययुक्त और उत्तम भाग्यवाले, अन्नवान् बनो, तुम्हारे अन्दर हास्य-विनोदमय वातावरण रहे, भूखे-प्यासे लोग न रहें । हे गृहो ! तुम हमसे डरो नहीं ॥७,६२.६॥

इहैव स्त मानु गात विश्वा रूपाणि पुष्यत ।
ऐष्यामि भद्रेणा सह भूयांसो भवता मया ॥७,६२.७॥

हे गृहो ! तुम इसी क्षेत्र में रहो, मुझ प्रवासी के पीछे अस्त-व्यस्त न हो; विभिन्न रूप वालों का पोषण करो। मैं कल्याण करने वाला साधनों सहित वापस जाऊँगा । हमारी हर प्रकार से उन्नति हो ॥७,६२.७॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६३ – तपः सूक्त

तप के लिए अग्नि देव की स्तुति

यदग्ने तपसा तप उपतप्यामहे तपः ।
प्रियाः श्रुतस्य भूयास्मायुष्मन्तः सुमेधसः ॥७,६३.१॥

तप की प्रक्रिया के आधार पर जो तप किया जाता है, वह हम करते हैं, उससे हम ज्ञान प्रिय तथा दीर्घायु बनें ॥७,६३.१॥

अग्ने तपस्तप्यामह उप तप्यामहे तपः ।
श्रुतानि शृण्वन्तः वयमायुष्मन्तः सुमेधसः ॥७,६३.२॥

हे अग्निदेव ! हम आपके समीप नियमों का पालन करते हुए, शारीरिक-मानसिक संयम रूप तप करते हैं। इससे श्रुतियों को सुनकर धारण करने की शक्ति बढ़े एवं दीर्घायु प्राप्त हो ॥७,६३.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६४ – शत्रुनाशन सूक्त

प्रजा को वश में करने की कामना

अयमग्निः सत्पतिर्वृद्धवृष्णो रथीव पत्तीन् अजयत्पुरोहितः ।
नाभा पृथिव्यां निहितो दविद्युतदधस्पदं कृणुतां यह पृतन्यवः ॥७,६४.१॥

जो अग्निदेव महान् देवों को हवि पहुँचाते हैं। जो पुरोहित, प्रवृद्ध, बलवान् तथा महारथी के समान प्रजा को अपने अधीन करने वाले हैं, वह पृथ्वी की नाभि-वेदिका में स्थापित होकर, हमारे शत्रुओं को पद दलित करें ॥७,६४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६५ – दुरितनाशन सूक्त

अग्नि की स्तुति

पृतनाजितं सहमानमग्निमुक्थ्यैर्हवामहे परमात्सधस्थात्।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्देवोऽति दुरितान्यग्निः ॥७,६५.१॥

युद्ध में शत्रुसेना को पराजित करने वाले, हवि के भार को सहन करने वाले अग्निदेव को उत्कृष्ट लोक से स्तोत्रों द्वारा बुलाते हैं । वह अग्निदेव हमें समस्त प्रकार के कष्ट से बचाएँ एवं दुर्गति करने वाले पापों का नाश करें॥७,६५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६६ – पापमोचन सूक्त

अभिमंत्रित जल द्वारा कौवे के पंखों की चोट से रक्षा तथा मृत्यु देवता की आराधना

इदं यत्कृष्णः शकुनिरभिनिष्पतन्न् अपीपतत्।
आपो मा तस्मात्सर्वस्माद्दुरितात्पान्त्वंहसः ॥७,६६.१॥

काले रंग के पक्षी (अथवा दुर्भाग्य) ने आकाश मार्ग से इन मेरे अंगों पर अभिघात किया है। इस कारण दुर्गति प्रदान करने वाले पाप से अभिमन्त्रित जल रक्षा करे ॥७,६६.१॥

इदं यत्कृष्णः शकुनिरवामृक्षन् निर्ऋते ते मुखेन ।
अग्निर्मा तस्मादेनसो गार्हपत्यः प्र मुञ्चतु ॥७,६६.२॥

हे मृत्युदेव ! इस काले (दुर्भाग्य सूचक) ने तुम्हारे मुख के द्वारा मेरा स्पर्श किया है। उससे लगे पाप को गार्हपत्य अग्निदेव नष्ट करें ॥७,६६.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६७ – दुरितनाशन सूक्त

अपामार्ग की स्तुति तथा पाप का निवारण

प्रतीचीनफलो हि त्वमपामार्ग रुरोहिथ ।
सर्वान् मच्छपथामधि वरीयो यवया इतः ॥७,६७.१॥

हे अपामार्ग औषधे ! आप प्रतीची फल (उलटे मुड़े फल) वाली होकर विकसित होती हैं। मेरे समस्त पापों (रोगों) को नष्ट करें ॥७,६७.१॥

यद्दुष्कृतं यच्छमलं यद्वा चेरिम पापया ।
त्वया तद्विश्वतोमुखापामार्गाप मृज्महे ॥७,६७.२॥

हे सर्वतोमुख अपामार्ग औषधे ! हम से जो दुःखदायी पापकर्म हो गए हैं और दुर्बुद्धि के कारण जो मलिन पाप हम कर चुके हैं, उन्हें आप सब प्रकार से नष्ट करें ॥७,६७.२॥

श्यावदता कुनखिना बण्डेन यत्सहासिम ।
अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे ॥७,६७.३॥

हे अपामार्ग औषधे ! आप हमारे उन पापों (दोषों) को दूर करें, जो काले-पीले से गन्दे दाँतों वाले, कुत्सित नख वाले एवं व्याधिग्रस्त निस्तेज व्यक्ति के साथ बैठने से मुझ में आए हो ॥७,६७.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६८ – ब्रह्म सूक्त

वेदाध्ययन का फल

यद्यन्तरिक्षे यदि वात आस यदि वृक्षेषु यदि वोलपेषु ।
यदश्रवन् पशव उद्यमानं तद्ब्राह्मणं पुनरस्मान् उपैतु ॥७,६८.१॥

जो इस आकाश में, वायु में, वृक्षों में, घास आदि वनस्पतियों में एवं पशुओं (प्राणियों) में सदा स्रवित होता है, प्रकट होने वाला ब्रह्मतेज हमें पुन: प्राप्त हो ॥७,६८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ६९ – आत्मा सूक्त

इंद्रियों की शक्ति की कामना

पुनर्मैत्विन्द्रियं पुनरात्मा द्रविणं ब्राह्मणं च ।
पुनरग्नयो धिष्ण्या यथास्थाम कल्पयन्तामिहैव ॥७,६९.१॥

हमें इन्द्रिय शक्ति, आत्मचेतना एवं ब्रह्म फिर से प्राप्त हों । यज्ञादि स्थानों में रहने वाली अग्नियाँ हमें प्राप्त हों । हम फिर से धन प्राप्त करके समृद्ध बनें ॥१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७० – सरस्वती सूक्त

सरस्वती देवी की प्रशंसा

सरस्वति व्रतेषु ते दिव्येषु देवि धामसु ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः ॥७,७०.१॥

हे सरस्वतीदेवि ! आपके दिव्य व्रतों और धामों के लिए अर्पित आहुतियों को आप ग्रहण करें। आप हमें पुत्र – पौत्रादि रूप प्रजा प्रदान करें ॥७,७०.१॥

इदं ते हव्यं घृतवत्सरस्वतीदं पितृणां हविरास्यं यत्।
इमानि त उदिता शम्तमानि तेभिर्वयं मधुमन्तः स्याम ॥७,७०.२॥

हे सरस्वतीदेवि ! आपके लिए हमने घृतयुक्त हवि अर्पित की हैं, उसे आप पितरों तक पहुँचने के लिए प्रेरित करे । जो हवि हम आपके लिए अर्पित करते हैं, उसके प्रभाव से हम मधुरता युक्त अन्न से सम्पन्न हों ॥७,७०.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७१- सरस्वती सूक्त

सरस्वती देवी की प्रशंसा

शिवा नः शंतमा भव सुमृडीका सरस्वति ।
मा ते युयोम संदृशः ॥७,७१.१॥

हे वाग्देवी सरस्वति ! आप समस्त सुख देने वाली हैं। आप हमें रोगों से पूर्णरूपेण मुक्त करके हमारा कल्याण करें । हे देवि ! हम आपके वास्तविक स्वरूप का दर्शन करते रहें ॥७,७१.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७२ – सुख सूक्त

सुख की कामना

शं नो वातो वातु शं नस्तपतु सूर्यः ।
अहानि शं भवन्तु नः शं रात्री प्रति धीयताम् ।
शमुषा नो व्युछतु ॥७,७२.१॥

हे वायुदेव ! आप हमारे लिए सुखदायकरूप से प्रवाहित हों एवं सुखपूर्वक प्रेरित करने वाले सूर्यदेवता सुख-स्वास्थ्यवर्द्धक ताप ही प्रदान करें । हमारा उषाकाल, दिन एवं रात्रि में सब प्रकार कल्याण हो ॥७,७२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७३ – शत्रुदमन सूक्त

निर्ऋति देवी की स्तुति

यत्किं चासौ मनसा यच्च वाचा यज्ञैर्जुहोति हविषा यजुषा ।
तन् मृत्युना निर्ऋतिः संविदाना पुरा सत्यादाहुतिं हन्त्वस्य ॥७,७३.१॥

जो शत्रु हमें नष्ट करने के संकल्पसहित हवि और मन्त्रों से अभिचार कर्म कर रहा हो, उसके मन वाणी और देह से किए गए कर्म के फलित होने के पहले ही, हे नितिदेव ! आप मृत्यु के सहयोग से उसे नष्ट करें ॥७,७३.१॥

यातुधाना निर्ऋतिरादु रक्षस्ते अस्य घ्नन्त्वनृतेन सत्यम् ।
इन्द्रेषिता देवा आजमस्य मथ्नन्तु मा तत्सं पादि यदसौ जुहोति ॥७,७३.२॥

यातुधान, राक्षस और नितिदेव, हमारे शत्रु द्वारा किए जा रहे अभिचार कर्म को विपरीत क्रिया द्वारा नष्ट कर दें ।

इन्द्रदेव द्वारा प्रेरित देवता शत्रु द्वारा हवन में प्रयुक्त किए जाने वाले घृत को नष्ट कर दें ॥७,७३.२॥

अजिराधिराजौ श्येनौ संपातिनाविव ।
आज्यं पृतन्यतो हतां यो नः कश्चाभ्यघायति ॥७,७३.३॥

हमारे अनिष्ट करने वाले शत्रु के घृत द्वारा होने वाले हवन को अधिराज और अजिर नामक मृत्यु-दूत श्येनबाज के समान झपट कर नष्ट कर दें ॥७,७३.३॥

अपाञ्चौ त उभौ बाहू अपि नह्याम्यास्यम् ।
अग्नेर्देवस्य मन्युना तेन तेऽवधिषं हविः ॥७,७३.४॥

हे अभिचारी शत्रु ! हम तुम्हारी दोनों भुजाएँ एवं मुँख बाँधते हैं और अग्नि के भयानक कोप के द्वारा तुम्हारी हवि, घृत आदि का नाश करते हैं ॥७,७३.४॥

अपि नह्यामि ते बाहू अपि नह्याम्यास्यम् ।
अग्नेर्घोरस्य मन्युना तेनऽवधिषं हविः ॥७,७३.५॥

हे शत्रु ! अभिचार कर्म में प्रवृत्त हाथों को हम बाँधते हैं। मत्र बोलने वाले मुख को बाँधते हैं । हवि द्वारा सिद्ध होने वाले तेरे कार्य को भी हम अग्नि के विकराल कोप से नष्ट करते हैं॥ ॥७,७३.५॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७४ – अग्नि सूक्त

अग्नि की स्तुति

परि त्वाग्ने पुरं वयं विप्रं सहस्य धीमहि ।
धृषद्वर्णं दिवेदिवे हन्तारं भङ्गुरावतः ॥७,७४.१॥

हे अणिमंथन से प्रकट अग्निदेव ! आप उन राक्षसों का नाश करें, जो यज्ञादि कर्म में बिघ्न उपस्थित करते हैं । हे अग्निदेव ! इन मारने वालों को नष्ट करने के लिए ही हम आपको सब ओर से धारण करते हैं ॥७,७३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७५ – इन्द्र सूक्त

हवि के लिए इंद्र का आह्वान

उत्तिष्ठताव पश्यतेन्द्रस्य भागमृत्वियम् ।
यदि श्रातं जुहोतन यद्यश्रातं ममत्तन ॥७,७५.१॥

आप वसन्त ऋतु आदि में होने वाले यज्ञ में इन्द्रदेव के निमित्त पक रहे यज्ञीय भाग का निरीक्षण, आसन से उठकर करते रहें । परिपक्व होने तक इन्द्रदेव की स्तुति करते रहें । पके भाग से इन्द्रदेव के लिए अग्नि में आहुति दें ॥७,७५.१॥

श्रातं हविरो ष्विन्द्र प्र याहि जगाम सूरो अध्वनो वि मध्यम् ।
परि त्वासते निधिभिः सखायः कुलपा न व्राजपतिं चरन्तम्
॥७,७५.२॥

हे इन्द्रदेव !आपके निमित्त पकाया जा रहा हविर्भाग पक चुका है तथा आपके योग का समय हो रहा है, अतः आप शीघ्रता से आएँ ।ऋत्विग्गण आपके निमित्त सोमपूरित पात्र लिए हुए हैं। हम सब आपकी उपासना उसी प्रकार कर रहे हैं, जिस प्रकार कुल के रक्षक पुत्रगण विचरण करते हुए संघपति पिता की उपासना करते हैं ॥७,७५.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७६ – इन्द्र सूक्त

दूध के रूप में हवि

श्रातं मन्य ऊधनि श्रातमग्नौ सुश्रृतं मन्ये तद्दतं नवीयः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य दध्नः पिबेन्द्र वज्रिन् पुरुकृज्जुषाणः
॥७,७६.१॥

यह दुग्ध गौ के थनों (स्तन) में पका, फिर अग्नि पर पकाया गया है, इसके पश्चात् इससे दधि बनाया गया, अतएव यह हविरूप सत्य और नवीन है । हे अनेक कर्मों के कर्ता वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप मध्य दिन के समय निचोड़े दधि मिश्रित सोम का पान करें ॥७,७६.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७७ – घर्म सूक्त

अश्विनीकुमारों की स्तुति तथा गोशाला सविता देव व उषा गाय का आह्वान

समिद्धो अग्निर्वृषणा रथी दिवस्तप्तो घर्मो दुह्यते वामिषे मधु ।
वयं हि वां पुरुदमासो अश्विना हवामहे सधमादेषु कारवः ॥७,७७.१॥

हे दोनों बलवान् अश्विनीकुमारो ! आप द्युलोक के देवताओं में अग्रणी हैं। प्रदीप्त अग्नि के ताप द्वारा भली प्रकार तपाया गया घृत पात्र में है। आप दोनों के निमित्त (गौ दुग्ध) मधुर रस का दोहन कर लिया है । हम वि पूरित घर वाले स्तोता, आपको यज्ञ में बुलाते हैं ॥७,७७.१॥

समिद्धो अग्निरश्विना तप्तो वां घर्म आ गतम् ।
दुह्यन्ते नूनं वृषणेह धेनवो दस्रा मदन्ति वेधसः ॥७,७७.२॥

हे कामनाओं की पूर्ति करने वाले दोनों अश्विनीकुमार ! अग्नि प्रदीप्त हो गई है, घृत तपाया जा चुका है । गोदुग्ध का दोहन कर लिया गया है । शत्रुसंहारक अश्विनीकुमारों की स्तुति द्वारा सेवा करके होता गणआनन्दित हो रहे हैं ॥७,७७.२॥

इवाहाकृतः शुचिर्देवेषु यज्ञो यो अश्विनोश्चमसो देवपानः ।
तमु विश्वे अमृतासो जुषाणा गन्धर्वस्य प्रत्यास्ना रिहन्ति ॥७,७७.३॥

प्रदीप्त प्रवर्य नाम का यह यज्ञ दोनों अश्विनीकुमारों के निमित्त ही है। जिस विशेष पात्र चमस के द्वारा अश्विनीकुमार रस पान करते हैं और जिससे देवों को हव्य अर्पित किया गया है, वह पात्र पवित्र है । उसी पात्र के द्वारा समस्त देवता अग्निरूपी मुख से अपना भाग ग्रहण करते हैं ॥७,७७.३॥

यदुस्रियास्वाहुतं घृतं पयोऽयं स वामश्विना भाग आ गतम् ।

माध्वी धर्तारा विदथस्य सत्पती तप्तं घर्मं पिबतं दिवः ॥७,७७.४॥

हे दोनों अश्विनीकुमारो ! वह घृतयुक्त गोदुग्ध पात्रों में भर दिया है। यह आपका भाग है, अत: आप दोनों आएँ । हे माधुर्ययुक्त, यज्ञस्वरूप, पालनकर्ता देवो ! आप आकर इस तपे हुए घर्म (परिपक्व रस) का पान करें ॥७,७७.४॥

तप्तो वां घर्मो नक्षतु स्वहोता प्र वामध्वर्युश्चरतु पयस्वान् ।
मधोर्दुग्धस्याश्विना तनाया वीतं पातं पयस उस्रियायाः ॥७,७७.५॥

हे दोनों अश्विनीकुमारो ! यह तपाया गया तेजरूपी दुग्ध आप दोनों को प्राप्त हो । हवन करने वाले अध्वर्युगण दुग्धसहित आपकी सेवा करें। आप दोनों स्वस्थ गौ के इस मधुर घृतयुक्त दुग्ध को ग्रहण करें ॥७,७७.५॥

उप द्रव पयसा गोधुगोषमा घर्मे सिञ्च पय उस्रियायाः ।
वि नाकमख्यत्सविता वरेण्योऽनुप्रयाणमुषसो वि राजति ॥७,७७.६॥

हे अध्वर्यों ! आप गोदुग्ध का दोहन कर, उसे यज्ञशाला में लाएँ। उस दुग्ध को तपाने के लिए पात्र में डालें । श्रेष्ठ सविता देवता उषाकाल के पश्चात् सुशोभित होते हुए सम्पूर्ण स्वर्गलोक को प्रकाशित कर रहे हैं ॥७,७७.६॥

उप ह्वयह सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दोहदेनाम् ।
श्रेष्ठं सवं सविता साविषन् नोऽभीद्धो घर्मस्तदु षु प्र वोचत्॥७,७७.७॥

सुखपूर्वकं दुहने योग्य गौ का हम आवाहन करते हैं ।इस गाय का दुग्ध स्वच्छ हाथों से दुहें ।इस 'सव' उपनाम वाले दुग्ध को सर्वप्रेरक सवितादेव हम सबके लिए प्रेरित करें ।प्रदीप्त तेजस्वी घर्म (यज्ञ) हमें उपदेश दें॥७,७७.७॥

हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिछन्ती मनसा न्यागन् ।
दुहामश्विभ्यां पयो अघ्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय ॥७,७७.८॥

हिंकार शब्द करती हुई, मन से बछड़े को चाहने वाली गौ (दिव्यवाणी) आ गई है । यह अबध्य (न मारने योग्य) गौ दोनों अश्विनीकुमारों सहित अन्य देवों के लिए दुग्ध प्रदान करे ।यह सौभाग्य को बढ़ाने वाली हो ॥७,७७.८॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुप याहि विद्वान् ।
विश्वा अग्ने अभियुजो विहत्य शत्रूयतामा भरा भोजनानि ॥७,७७.९॥

हे सबके द्वारा सेवित दानेच्छु अग्निदेव ! आप हमारी भक्ति से प्रसन्न होकर, हमारे यज्ञ में पधारें और हमारे शत्रुओं को सेनासहित नष्टकरके, उनके द्वारा भोगे जाने वाला धन हमें प्रदान करें ॥७,७७.९॥

अग्ने शर्ध महते सौभगाय तव द्युम्नान्युत्तमानि सन्तु ।
सं जास्पत्यं सुयममा कृणुष्व शत्रूयतामभि तिष्ठा महांसि ॥७,७७.१०॥

हे देव अग्ने ! आपका प्रदीप्त तेज ऊर्ध्वगामी एवं सौभाग्यशाली हो । आप उदार हृदय से हमें धन प्रदान करें

। आपकी कृपा से हम दोनों पति-पत्नी समान मन वाले होकर, आपकी सेवा करते रहें । आप हमारे शत्रुओं का नाश करें ॥७,७७.१०॥

सूयवसाद्भगवती हि भूया अधा वयं भगवन्तः स्याम ।
अद्धि तृणमघ्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती
॥७,७७.११॥

हे घर्मदुधे ! आप उत्तम घास को खाएँ एवं सौभाग्यशाली बनें । हम भी भाग्यशाली हों । आप घास भक्षण करती हुई, शुद्ध जल का पान करें ॥७,७७.११॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७८ – गण्डमालाचिकित्सा सूक्त

गंडमालाओं का वर्णन, क्रोध का विनाश तथा जातवेद अग्नि का वर्णन

अपचितां लोहिनीनां कृष्णा मातेति शुश्रुम ।
मुनेर्देवस्य मूलेन सर्वा विध्यामि ता अहम् ॥७,७८.१॥

काले रंग की पिशाचिनी गण्डमाला रोग की माता है, ऐसा सुना जाता है; उन सब प्रकार की गण्डमालाओं को 'मुनि' नाम वाली दिव्य औषधि के द्वारा मैं नष्ट करता हूँ ॥७,७८.१॥

विध्याम्यासां प्रथमां विध्यामि उत मध्यमाम् ।
इदं जघन्यामासामा छिनद्मि स्तुकामिव ॥७,७८.२॥

गण्डमाला रोग चाहे प्रारम्भिक अवस्था, मध्यम अवस्था एवं अन्तिम अवस्था का (जो भी) हो, हम इन तीनों अवस्था वाली गण्डमाला का नाश करते हैं ॥७,७८.२॥

त्वाष्ट्रेणाहं वचसा वि त ईर्ष्याममीमदम् ।
अथो यो मन्युष्टे पते तमु ते शमयामसि ॥७,७८.३॥

हे क्रोधी और ईर्ष्यालु पुरुष ! हम तुम्हारी ईर्ष्यालु अथवा क्रोधी प्रवृत्ति को सूक्ष्म विवेचनात्मक वाणी द्वारा शान्त करते हैं ॥७,७८.३॥

व्रतेन त्वं व्रतपते समक्तो विश्वाहा सुमना दीदिहीह ।
तं त्वा वयं जातवेदः समिद्धं प्रजावन्त उप सदेम सर्वे ॥७,७८.४॥

हे व्रतशील, जातवेदा अग्निदेव ! आप व्रतयुक्त होकर हर्षित मन से हमारे घर में प्रदीप्त रहें । हम सब पुत्र-पौत्रों सहित आपकी उपासना करें ॥७,७८.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ७९ – अघ्या सूक्त

गायों की स्तुति

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु ॥१॥

हे गौ माता ! रुद्रदेव आपको कष्ट न दें । व्याघ्र आदि हिंसक पशु आपसे दूर रहें, चोर आपका अपहरण न कर सकें। आप उत्तम प्रकार के बछड़ों सहित, तृण और निर्मल जल वाले क्षेत्र में विचरती हुई, उन्हें ग्रहण करें ॥७,७९.१॥

पदज्ञा स्थ रमतयः संहिता विश्वनाम्नीः ।
उप मा देवीर्देवेभिरेत ।
इमं गोष्ठमिदं सदो घृतेनास्मान्त्समुक्षत ॥२॥

हे आनन्द देने वाली गौओ ! आप अपने निवास को भली प्रकार जानने वाली हैं। अनेक दिव्य नाम एवं बछड़ों वाली, आप हमारे निकट आएँ । आप हमारी गोशाला एवं घर को

दुग्ध, घृत आदि गव्य पदार्थों से समृद्धशाली बनाएँ ७,७९.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८०- गण्डमालाचिकित्सा सूक्त

मंत्र और ओषधि के प्रयोग तथा क्षय रोग का वर्णन

आ सुस्रसः सुस्रसो असतीभ्यो असत्तराः ।
सेहोररसतरा हवणाद्विक्लेदीयसीः ॥७,८०.१॥

गण्डमाला रोग (बहने वाला) तथा बुरी से भी बुरी पीड़ा देने वाला होता है । यह मंत्र और औषधि द्वारा नष्ट हो । गण्डमाला रोग से ग्रसित जन, 'सेहु' से अधिक निर्वीर्य होते हैं। यह गण्डमाला नमक की अपेक्षा अधिक स्रवणशील है ॥७,८०.१॥

या ग्रैव्या अपचितोऽथो या उपपक्ष्याः ।
विजाम्नि या अपचितः स्वयंस्रसः ॥७,८०.२॥

गले में होने वाली गण्डमाला बगल में (काँख में) होने वाली गण्डमाला एवं गुह्य स्थानों में होने वाली गण्डमाला स्वयं स्रवणशील होती है ॥७,८०.२॥

यः कीकसाः प्रशृणाति तलीद्यमवतिष्ठति ।
निर्हास्तं सर्वं जायान्यं यः कश्च ककुदि श्रितः ॥७,८०.३॥

जो क्षय रोग अस्थियों में व्याप्त होता है, जो मांस का क्षय कर देता है, जो रोग ककुदि (गर्दन के नीचे पृष्ठ भागों में जम जाता है, यह रोग अधिक स्त्री के साथ अधिक असंयमित जीवनयापन करने से होता है । औषधि एवं अग्निदेव उसे नष्ट करें ॥७,८०.३॥

पक्षी जायान्यः पतति स आ विशति पूरुषम् ।
तदक्षितस्य भेषजमुभयोः सुक्षतस्य च ॥७,८०.४॥

इस क्षय रोग के उत्पन्न करने वाले विषाणु हवा में उड़ते हुए पुरुष देह तक पहुँचकर, उसे प्रभावित कर लेते हैं। कम या पुराने समय से पीड़ित क्षय रोगों को मंत्राभिमंत्रित वीणा तंत्र खण्ड आदि औषधि स्वस्थ करती हैं ॥७,८०.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८१ – गण्डमालाचिकित्सा सूक्त

क्षय रोग तथा सोमरस का वर्णन

विद्म वै ते जायान्य जानं यतो जायान्य जायसे ।
कथं ह तत्र त्वं हनो यस्य कृण्मो हविर्गृहे ॥१॥

असंयमित जीवन जीने से उत्पन्न हे क्षयरोग ! हम तेरी उत्पत्ति को जानते हैं। जिस घर में हवन होता है, उस घर में तू कैसे पहुँच सकता है? ॥७,८१.१॥

धृषत्पिब कलशे सोममिन्द्र वृत्रहा शूर समरे वसूनाम् ।
माध्यन्दिने सवन आ वृषस्व रयिष्ठानो रयिमस्मासु धेहि ॥२॥

हे शत्रुओं को दबाने वाले शूर इन्द्रदेव ! आप पात्र में रखे सोमरस का पान करें। आप वृत्रासुर का संहार करने वाले हैं। मध्य दिन के समय आप सोम का पान कर प्रसन्न होकर हमें धन से युक्त करें ॥७,८१.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८२ – शत्रुनाशन सूक्त

मरुतों की स्तुति

सांतपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन ।
अस्माकोती रिशादसः ॥७,८२.१॥

हे सूर्य से सम्बन्धित मरुद् देवगणो ! आपके निमित्त तैयार की गई इस हवि का आप सेवन करें और शत्रुओं से हमारी रक्षा करें ॥७,८२.१॥

यो नो मर्तो मरुतो दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ।
द्रुहः पाशान् प्रति मुञ्चतां सस्तपिष्ठेन तपसा हन्तना तम् ॥७,८२.२॥

हे धन देने वाले मरुद्गणो ! यदि कोई मनुष्य परोक्षरूप से हमारे चित्त को क्षुब्ध करना चाहे, उसे वरुणदेव के पाश

बाँध लें और आप उस प्रहार की इच्छा वाले पुरुष का संहार करें ॥७,८२.२॥

सम्वत्सरीणा मरुतः स्वर्का उरुक्षयाः सगणा मानुषासः ।
ते अस्मत्पाशान् प्र मुञ्चन्त्वेनसस्सांतपना मत्सरा मादयिष्णवः ॥७,८२.३॥

प्रत्येक संवत्सर में प्रकाशित होने वाले, उत्तम मत्रों द्वारा स्तुत्य, विशाल अन्तरिक्ष में निवास करने वाले, वर्षा करने वाले, मानवों का कल्याण करने वाले, शत्रुओं को पीड़ित करने वाले मरुदेव हमें पा- बन्धनों से मुक्त करें ॥७,८२.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८३- बन्धमोचन सूक्त

अग्नि की स्तुति

वि ते मुञ्चामि रशनां वि योक्त्रं वि नियोजनम् ।
इहैव त्वमजस्र एध्यग्ने ॥७,८३.१॥

मैं (प्रयोक्ता) तुम्हारी रोग बन्धनरूप रस्सियों को खोलता हूँ । कण्ठ प्रदेश, बगल की, मध्यदेश की एवं निमदेशीय (रोगजनित) गाठों से तुम्हें मुक्त करता हूँ । हे अग्निदेव ! आप इस रोगार्त के अनुकूल होकर बढ़े ॥७,८३.१॥

अस्मै क्षत्राणि धारयन्तमग्ने युनज्मि त्वा ब्रह्मणा दैव्येन ।
दीदिह्यस्मभ्यं द्रविणेह भद्रं प्रेमं वोचो हविर्दां देवतासु ॥७,८३.२॥

हे अग्निदेव ! हम आपको इस यजमान का बल बढ़ाने एवं वि वहन करने के लिए बुलाते हैं। आप कृपा करके इस

रोगी के स्वास्थ्य लाभ हेतु इन्द्रादि देवों से प्रार्थना करें । हमें पुत्र, धन आदि से समृद्ध करें ॥७,८३.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८४ – अमावास्या सूक्त

अमावस्या का वर्णन और स्तुति

यत्ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा ।
तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् ॥७,८४.१॥

हे अमावास्ये ! आपके महत्त्व को स्वीकार करके देवगणों ने आपको हवि का जो भाग अर्पित किया है, उसे ग्रहण कर हमारे इस यज्ञ को पूर्ण करें । आप हमें कार्यकुशल, सुन्दर पुत्रादि सहित धन प्रदान करें ॥७,८४.१॥

अहमेवास्म्यमावास्या मामा वसन्ति सुकृतो मयीमे ।
मयि देवा उभयह साद्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगछन्त सर्वे ॥७,८४.२॥

मैं अमावास्या का अधिष्ठाता देव हूँ । श्रेष्ठ कर्म करने वाले देवता मेरे में वास करते हैं और साध्यसहित इन्द्रादि दोनों प्रकार के देवता मुझ में आकर समभाव से रहते हैं ॥७,८४.२॥

आगन् रात्री सङ्गमनी वसूनामूर्जं पुष्टं वस्वावेशयन्ती ।
अमावास्यायै हविष विधेमोर्जं दुहाना पयसा न आगन्
॥७,८४.३॥

समस्त वसुओं को मिलाने वाली पुष्टिकारक और बल-वर्द्धक धन देने वाली प्रनिनि अमावास्या वाली रात्रि आ गई है।इसके निमित्त हम हवि अर्पित करते हैं। वह हमें अन्न, दुग्ध, अन्य ग्म एवं धन आदि में पुष्ट करे ॥७,८४.३॥

अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन् नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयिणाम्
॥७,८४.४॥

हे अमावास्ये ! आपके अतिरिक्त कोई अन्य देवता समस्त जगत् की रचना करने में समर्थ नहीं है। हम आपको हवि

अर्पित करते हुए मनोकामनाओं की पूर्ति की प्रार्थना करते हैं । हवि ग्रहण करके आप हमारी मनोकामनाओं को पूर्ण करते हुए हमें धन प्रदान करें ॥७,८४.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८५- पूर्णिमा सूक्त

पूर्णमासी की स्तुति पूर्णमास यज्ञ तथा प्रजापति की प्रशंसा

पौर्णमासी जिगाय ।
तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम ॥७,८५.१॥

पूर्ण चन्द्र वाली तिथि को पूर्णमासी कहते हैं। पूर्व में, पश्चिम में एवं मध्य में यह दमकती है। उसमें देवताओं के साथ रहते हुए हम स्वर्ग से ऊपर अन्नरस प्राप्त कर आनन्दित हों ॥७,८५.१॥

वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे ।
स नो ददात्वक्षितां रयिमनुपदस्वतीम् ॥७,८५.२॥

अभिलषित फल के देने वाले हविरूप, अन्नरूप अन्न वाले पूर्णमास का हम यजन करते हैं। वह पूजित पूर्णमास प्रसन्न होकर अक्षय एवं अविनाशी धन प्रदान करें ॥७,८५.२॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन् नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्
॥७,८५.३॥

हे प्रजापतिदेव ! आप सर्वत्र व्याप्त होकर समस्त रूपों के सृजेता हैं, अन्य कोई ऐसा करने में समर्थ नहीं हैं। जिन कामनाओं से हम आहुति अर्पित करते हैं, उन्हें आप पूर्ण करें एवं हमें धन प्रदान करें ॥७,८५.३॥

पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्नां रात्रीणामतिशर्वरेषु ।
यह त्वां यज्ञैर्यज्ञियह अर्धयन्त्यमी ते नाके सुकृतः प्रविष्टाः
॥७,८५.४॥

पूर्णिमा तिथि, दिन तथा रात्रि दोनों में प्रथम यज्ञ करने योग्य है । हे पूजनीय पूर्णिमा ! जो यज्ञों द्वारा आपकी पूजा करते

हैं; उन श्रेष्ठ कर्म करने वालों को स्वर्गधाम में प्रवेश मिलता है ॥७,८५.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८६-सूर्य-चन्द्र सूक्त

सूर्य और चंद्र का वर्णन तथा सोम, चंद्रकलाओं का वर्णन

पूर्वापरं चरतो मययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।
विश्वान्यो भुवना विचष्ट ऋतूंरन्यो विदधज्जायसे नवः
॥७,८६.१॥

माया (कौशल) के द्वारा आगे-पीछे चलते हुए दो बालक (सूर्य और चन्द्र) क्रीडा करते हुए से एक दूसरे को पीछा करते हुए समुद्र तक पहुँचते हैं। उनमें से एक (सूर्य) समस्त भुवनों को प्रकाशित करता है और दूसरा (चन्द्र) ऋतुओं को बनाता हुआ स्वयं नवीन-नवीन (नई कलाओं वाले) रूपों में उत्पन्न होता है ॥७,८६.१॥

नवोनवो भवसि जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो वि दधास्यायन् प्र चन्द्रमस्तिरसे धीर्घमायुः
॥७,८६.२॥

हे चन्द्रदेव ! आप कला बदलते रहने के कारण नित्य नवीन हैं। आप उसी तरह तिथियों के ज्ञापक हैं, जिस तरह केतु (ध्वजा) किसी स्थान विशेष का ज्ञापन करता है । हे सूर्यदेव ! आप दिनों का ज्ञापन करते हुए, उषाकाल के अन्तिम समय में प्रकट होते हैं। आप समस्त देवताओं को उनका उचित हविर्भाग अर्पित करते हैं और चन्द्रदेव दीर्घ आयु प्रदान करते हैं ॥७,८६.२॥

सोमस्याम्शो युधां पतेऽनूनो नाम वा असि ।
अनूनं दर्श मा कृधि प्रजया च धनेन च ॥७,८६.३॥

हे सोम के अंश ! हे युद्धों के स्वामी ! आपका यश कभी क्षीण नहीं होता । हे दर्शनीयदेव ! आप प्रसन्न होकर हमें प्रजा एवं श्रेष्ठ धनादि से परिपूर्ण करें ॥७,८६.३॥

दर्शोऽसि दर्शतोऽसि समग्रोऽसि समन्तः ।
समग्रः समन्तो भूयासं गोभिरश्वैः प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन ॥७,८६.४॥

हे दर्शनीय सोम !आप दर्शन करने योग्य हैं ।आप अनेक कलाओं द्वारा विकसित होकर (पूर्णिमा पर) समग्र हो जाते हैं। आप स्वयं पूर्ण हैं, अतएव हमको भी अश्व, गौ, सन्तान, घर एवं धनादि से अन्त तक परिपूर्ण रखें ॥७,८६.४॥

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तस्य त्वं प्राणेना प्यायस्व ।
आ वयं प्यासिषीमहि गोभिरश्वैः प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन ॥७,८६.५॥

हे सोमदेव ! जो शत्रु हमसे द्वेष करते हैं, उनसे हमें भी द्वेष करते हैं । आप उन शत्रुओं के प्राणों (को खींचकर उन) से आगे बढ़े । हमें भी अश्व, गौ आदि पशु एवं घर, धनादि द्वारा सम्पन्न करें ॥७,८६.५॥

यं देवा अंशुमाप्याययन्ति यमक्षितमक्षिता भक्षयन्ति ।
तेनास्मान् इन्द्रो वरुणो बृहस्पतिरा प्याययन्तु भुवनस्य गोपाः ॥७,८६.६॥

जिन एक कलात्मक सोमदेव को देवता शुक्लपक्ष में प्रतिदिन एक-एक कला से बढ़ाते हैं । जिस क्षयरहित सोम

का अविनाशीदेव भक्षण करते हैं। देवाधिपति इन्द्रदेव, वरुणदेव एवं बृहस्पतिदेव उस सोम के द्वारा हमारा कल्याण करते हुए हमें आगे बढ़ाएँ ॥७,८६.६॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८७ – अग्नि सूक्त

अग्नि की स्तुति

अभ्यर्चत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ।
इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ताम् ॥७,८७.१॥

हे गौ (वाणी) ! सुन्दर स्तुतियों द्वारा आप अग्नि की अर्चना करें एवं हमें कल्याणकारी धन प्रदान करें । हम इस यज्ञ में देवताओं को लाएँ और आपकी कृपा से यज्ञ में घृत की धाराएँ मधुर भाव से देवताओं की ओर चलें ॥७,८७.१॥

मय्यग्रे अग्निं गृह्णामि सह क्षत्रेण वर्चसा बलेन ।
मयि प्रजां मय्यायुर्दधामि स्वाहा मय्यग्निम् ॥७,८७.२॥

हम-सर्वप्रथम आहुतियों के आधार अग्नि को धारण करते हैं, क्षात्र-शोर्य एवं ज्ञान के तेज के साथ अग्नि को धारण

करते हैं । हमें प्रजा एवं आयुष्य प्राप्त हो, इसनिमित्त हम अग्निदेव को समिधादि समर्पित करते हैं ॥७,८७.२॥

इहैवाग्ने अध्ध्यारया रयिं मा त्वा नि क्रन् पूर्वचित्ता निकारिणः ।
क्षत्रेणाग्ने सुयममस्तु तुभ्यमुपसत्ता वर्धतां ते अनिष्टृतः ॥७,८७.३॥

हे अग्निदेव ! हमसे वैर भाव रखने वालों पर आप प्रसन्न न हों । हम आपकी सेवा करते हैं, आप हम पर प्रसन्न होकर हमें ऐश्वर्यशाली बनाएँ। आप अपने रूप में बल सहित स्थिर हों । आपकी सेवा करने वाले का प्रभाव बढ़े और वह सब प्रकार समृद्ध हो ॥७,८७.३॥

अन्वग्निरुषसामग्रमख्यदन्वहानि प्रथमो जातवेदाः ।
अनु सूर्य उषसो अनु रश्मीन् अनु द्यावापृथिवी आ विवेश ॥७,८७.४॥

उषाकाल के साथ ही अग्निदेव प्रकाशित होते हैं। यह जातवेदा अग्नि प्रथम उषाकाल में सूर्यरूप में प्रकट होते हैं,

पुन: दिन को प्रकाशित करते हुए अपनी प्रकाशित-किरणों द्वारा सम्पूर्ण द्यावापृथिवी में प्रकाश फैलाते हैं ॥७,८७.४॥

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यत्प्रति अहानि प्रथमो जातवेदाः ।
प्रति सूर्यस्य पुरुधा च रश्मीन् प्रति द्यावापृथिवी आ ततान
॥७,८७.५॥

प्रत्येक उषाकाल में अग्निदेव प्रकाशित होते हैं । यह प्रतिदिन के साथ भी प्रकाशित होते हैं । जातवेदो सूर्यरूप अग्निदेव, सूर्य किरणों में भी स्वयं प्रकाशित होते हैं एवं समस्त द्यावा-पृथिवी में प्रकाश फैलाते हैं ॥७,८७.५॥

घृतं ते अग्ने दिव्ये सधस्थे घृतेन त्वां मनुरद्या समिन्धे ।
घृतं ते देवीर्नप्त्य आ वहन्तु घृतं तुभ्यं दुह्रतां गावो अग्ने
॥७,८७.६॥

हे अग्ने !आपका घृत देवताओं के सह- निवास स्थान में हैं ।आज भी मनुदेव आपको घृत द्वारा प्रदीप्त करते हैं। आपके नप्ता (नाती) जल-घृत को अभिमुख लाएँ और गौएँ आपके लिए घृतयुक्त दुग्ध प्रदान करें ॥७,८७.६॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८८ – पाशमोचन सूक्त

वरुण की स्तुति

अप्सु ते राजन् वरुण गृहो हिरण्ययो मितः ।
ततो धृतव्रतो राजा सर्वा धामानि मुञ्चतु ॥७,८८.१॥

हे राजन् वरुणदेव ! आपका स्वर्णमय घर जल में है । वह व्रत धारणकर्ता वरुणदेव समस्त धामों को बन्धन मुक्त करें ॥७,८८.१॥

दाम्नोदाम्नो राजन्न् इतो वरुण मुञ्च नः ।
यदापो अघ्न्या इति वरुणेति यदूचिम ततो वरुण मुञ्च नः ॥७,८८.२॥

हे राजन् वरुणदेव ! आप हमारे शरीर में स्थित सभी रोगों से हमको मुक्त करें। आप रोग एवं पाप से हमारी रक्षा करें । हम वाणी के दुरुपयोगजनित पाप से मुक्त हों ॥७,८८.२॥

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय ।
अधा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितयह स्याम ॥७,८८.३॥

हे वरुणदेव ! आप हमारे शरीर के ऊर्श्वभाग वाले पाश को ऊपर की ओर खींचकर नष्ट करें, मध्य पाश को खींचकर अलग करें एवं नीचे के भाग में स्थित पाश को निकालकर नष्ट करें, फिर हम समस्त पाशों से मुक्त होकर अखण्डित स्थिति में रहें ॥७,८८.३॥

प्रास्मत्पाशान् वरुण मुञ्च सर्वान् य उत्तमा अधमा वारुणा यह ।
दुष्वप्न्यं दुरितं नि ष्वास्मदथ गछेम सुकृतस्य लोकम् ॥७,८८.४॥

हे वरुणदेव ! आप हमें अपने उत्तम एवं अधम दोनों प्रकार के पाशों से मुक्त करें । दुःस्वप्न देखने से होने वाले पापों को दूर करें । पाश और पापों से मुक्त होकर हम पुण्यलोक प्राप्त करें ॥७,८८.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ८९ – क्षत्रभूदग्नि सूक्त

अग्नि तथा इंद्र की स्तुति

अनाधृष्यो जातवेदा अमर्त्यो विराडग्ने क्षत्रभृद्दीदिहीह ।
विश्वा अमीवाः प्रमुञ्चन् मानुषीभिः शिवाभिरद्य परि पाहि नो गयम् ॥७,८९.१॥

हे अग्निदेव ! आप अमर, बलशाली एवं समस्त उत्पन्न हुए प्राणियों को जानने वाले हैं। आप हमारे इस कार्य में प्रदीप्त होकर समस्त रोगों का शमन करें एवं हमें कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित रखें ॥७,८९.१॥

इन्द्र क्षत्रमभि वाममोजोऽजायथा वृषभ चर्षणीनाम् ।
अपानुदो जनममित्रयन्तमुरुं देवेभ्यो अकृणोरु लोकम् ॥७,८९.२॥

हे इन्द्रदेव !आप श्रेष्ठ क्षात्रबल वाले हैं । हे कामनाओं की पूर्ति करने वाले अग्निदेव ! आप हमसे दुर्व्यवहार करने वाले हमारे शत्रुओं को विनष्ट करें एवं देवगण जहाँ निवास करते हैं, उस स्वर्गलोक को प्राप्त कराएँ ॥७,८९.२॥

मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगम्यात्परस्याः ।
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व
॥७,८९.३॥

पर्वत निवासी, खतरनाक पंजे वाले, भयंकर सिंह के समान बलशाली इन्द्रदेव दूर के लोक से आएँ । हे इन्द्रदेव ! आप अपने तीक्ष्ण किए गए वज्र के द्वारा संग्राम में शत्रुओं का तिरस्कार करते हुए उनका नाश करें ॥७,८९.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९० – अरिष्टनेमि सूक्त

गरुड़ का आह्वान

त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहोवानं तरुतारं रथानाम् ।
अरिष्टनेमिं पृतनाजिमाशुं स्वस्तयह तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥७,९०.१॥

जो सुपर्ण बलवान् हैं, देवगणों ने सोम आहरण के लिए जिन्हें प्रेरित किया था, जो मुझ अरिष्टनेमि के पिता एवं शत्रुओं को पराजित करने वाले तथा शीघ्र गमन करने वाले हैं, ऐसे प्रसिद्ध तृक्षपुत्र सुपर्ण (गरुड़) का हम आवाहन करते हैं ॥७,९०.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९१ – त्राता इन्द्र सूक्त

इंद्र का आह्वान

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम् ।
हुवे नु शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्ति न इन्द्रो मघवान् कृणोतु
॥७,९१.१॥

भय से रक्षा करने वाले, समस्त प्रकार के संघर्षों में बुलाने योग्य इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं। हम शक्र पुरुहूत इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं । वह धनवान् इन्द्रदेव हमारा सब प्रकार कल्याण करें ॥७,९१.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९२- व्यापकदेव सूक्त

अग्नि रूप इंद्र की प्रशंसा

यो अग्नौ रुद्रो यो अप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश ।
य इमाविश्वा भुवनानि चाक्लृपे तस्मै रुद्राय नमो अस्त्वग्नयह ॥७,९२.१॥

उन अग्नि के समान तेजस्वी रुद्रदेव को हम नमस्कार करते हैं, जो अग्नि में, जल में, औषधियों में समा गए हैं एवं जो समस्त सृष्टि के प्राणियों की रचना करने वाले हैं ॥७,९२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९३ – सर्पविषनाशन सूक्त

सर्पविष का विनाश

अपेह्यरिरस्यरिर्वा असि विषे विषमपृक्था विषमिद्वा अपृक्थाः ।
अहिमेवाभ्यपेहि तं जहि ॥७,९३.१॥

हे विष ! तुम सबके शत्रु हो । तुम इस (दंशित) व्यक्ति से निकलकर उसे सर्प में प्रवेश करो एवं उस सर्प के भी शत्रुरूप होकर उसे मार डालो ॥७,९३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९४ – दिव्यआपः सूक्त

अग्नि तथा जल की स्तुति

अपो दिव्या अचायिषं रसेन समपृक्ष्महि ।
पयस्वान् अग्न आगमं तं मा सं सृज वर्चसा ॥७,९४.१॥

मैं दिव्य जल के रस से युक्त हो जाऊँ । हे अग्निदेव ! मैं आपके पास दुग्ध लेकर आया हूँ, कृपा कर आप मुझे तेजस्वी बनाएँ ॥७,९४.१॥

सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा ।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात्सह ऋषिभिः ॥७,९४.२॥

हे अग्निदेव ! आप हमें पवित्र बल से युक्त करें। आपकी इस कृपा से, हमें षि एवं देवताओं सहित इन्द्रदेव भी पवित्र मानें । आप सब हमें पुत्र-पौत्र और दीर्घ आयु प्रदान करें ॥७,९४.२॥

इदमापः प्र वहतावद्यं च मलं च यत्।
यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपे अभीरुणम् ॥७,९४.३॥

हे जल समूह ! हमने जो निन्दा, असत्य भाषण, उरुण न चुकाना, पिता से द्रोह करना जैसे पापकर्म किए हैं; आप इन पापों के समूह को हमसे दूर करें एवं हमारी रक्षा करें ॥७,९४.३॥

एधोऽस्येधिषीय समिदसि समेधिषीय ।
तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ॥७,९४.४॥

है अग्निदेव ! जिस प्रकार आप बल द्वारा तेजस्वी होकर शत्रुओं का नाश करते हैं, उसी प्रकार हमें तेजस्वी बनाएँ ॥७,९४.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९५ – शत्रुबलनाशन सूक्त

अग्नि तथा इंद्र की स्तुति

अपि वृश्च पुराणवद्वततेरिव गुष्पितम् ।
ओजो दासस्य दम्भय ॥७,९५.१॥

हे अग्निदेव ! आप इस हिंसक शत्रु के बल एवं ओज को उसी तरह नष्ट करें, जिस प्रकार पुराने शत्रुओं के बल- वीर्य को नष्ट किया हैं ॥७,९५.१॥

वयं तदस्य सम्भृतं वस्विन्द्रेन वि भजामहै ।
म्लापयामि भ्रजः शिभ्रं वरुणस्य व्रतेन ते ॥७,९५.२॥

हम शत्रु के एकत्रित किए गए धन को इन्द्रदेव की सहायता से प्राप्त करते हैं तथा वरुणदेव की सहायता से शत्रु के तेजस्वी घमंड को नष्ट करते हैं ॥७,९५.२॥

यथा शेपो अपायातै स्त्रीषु चासदनावयाः ।
अवस्थस्य क्नदीवतः शाङ्कुरस्य नितोदिनः ।
यदाततमव तत्तनु यदुत्ततं नि तत्तनु ॥७,९५.३॥

नीच स्तर की वाणी द्वारा, काँटे (शूल) के समान पीड़ा देने वाले मनुष्य का फैला हुआ आतंक नष्ट हो । इनकी शारीरिक सामर्थ्य का पतन हो जाए। यह शरीर के अवयव स्त्रियों को पीड़ित न कर सकें ॥७,९५.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९६ – सुत्रामा इन्द्र सूक्त

धन के स्वामी इंद्र की प्रशंसा

इन्द्रः सुत्रामा स्ववामवोभिः सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः ।
बाधतां द्वेषो अभयं नः कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम
॥७,९६.१॥

श्रेष्ठ रक्षक इन्द्रदेव अपने सुखकारी रक्षा साधनों से हमारी रक्षा करें । समस्त धन से सम्पन्न इन्द्रदेव हमें धन प्रदान करें एवं शत्रुओं का संहार करके हमें निर्भयता प्रदान करें ॥७,९६.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९७ – सुत्रामाइन्द्र सूक्त

इंद्र की प्रशंसा

स सुत्रामा स्ववामिन्द्रो अस्मदाराच्चिद्द्वेषः सनुतर्युयोतु ।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम
॥७,९७.१॥

वह इन्द्रदेव श्रेष्ठ रक्षक हैं, अतएव अपनी शक्ति से शत्रुओं को हमारे पास से कहीं दूर भगा देते हैं। ऐसे इन्द्रदेव की कल्याण करने वाली सद्बुद्धि का अनुग्रह हमें प्राप्त होता रहे, जिससे हमारा कल्याण हो ॥७,९७.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९८- शत्रुनाशन सूक्त

इंद्र की स्तुति

इन्द्रेण मन्युना वयमभि ष्याम पृतन्यतः ।
घ्नन्तो वृत्राण्यप्रति ॥७,९८.१॥

हमसे युद्ध करने की जिनकी इच्छा हैं, ऐसे शत्रुओं को हम इन्द्रदेव के सहयोग से पराजित करें । वह इन्द्रदेव पराजित शत्रुओं को समूल नष्ट करें ॥७,९८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ९९ – सांमनस्य सूक्त

सोमरस

ध्रुवं ध्रुवेण हविषाव सोमं नयामसि ।
यथा न इन्द्रः केवलीर्विशः संमनसस्करत्॥७,९९.१॥

हम पुरोडाश आदि हवि सहित सुस्थिर सोम को सोम-शकट या पालकी आदि साधनों से इन्द्रदेव के निमित्त लाते हैं। इससे प्रसन्न होकर इन्द्रदेव हमारी सन्तानों को सुस्थिर मति प्रदान करें ॥७,९९.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०० – शत्रुनाशन सूक्त

उच्छोचन व प्रशोचन नामक मृत्यु देव

उदस्य श्यावौ विथुरौ गृध्रौ द्यामिव पेततुः ।
उच्छोचनप्रशोचनवस्योच्छोचनौ हृदः ॥७,१००.१॥

शत्रु के ओष्ठ चिर जाएँ या उसके प्राण और अपान शरीर से निकलकर आकाश में उसी तरह से उड़ जाएँ, जिस प्रकार गिद्ध उड़ते हैं ॥७,१००.१॥

अहमेनावुदतिष्ठिपं गावौ श्रान्तसदाविव ।
कुर्कुराविव कूजन्तावुदवन्तौ वृकाविव ॥७,१००.२॥

जिस प्रकार थके हुए बैलों को, भौंकते हुए कुत्तों एवं भेड़ियों को लोग बलपूर्वक भगा देते हैं, उसी प्रकार शत्रु के प्राणों को हम बलपूर्वक अलग करते हैं ॥७,१००.२॥

आतोदिनौ नितोदिनावथो संतोदिनावुत ।
अपि नह्याम्यस्य मेढ्रं य इतः स्त्री पुमान् जभार ॥७,१००.३॥

हम उस शत्रुरूप स्त्री अथवा पुरुष के मर्म स्थानों को पीड़ित करते हैं, जिनने हमारे धन का हरण कर लिया है, वह स्त्री या पुरुष इस पीड़ा से व्यथित हो, प्राण त्याग दें ॥७,१००.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०१ – शत्रुनाशन सूक्त

शरीर की रक्षा

असदन् गावः सदनेऽपप्तद्वसतिं वयः ।
आस्थाने पर्वता अस्थुः स्थाम्नि वृक्कावतिष्ठिपम् ॥७,१०१.१॥

जिस प्रकार गौएँ गोशाला में, पक्षी अपने घोंसले में सुखपूर्वक रहते हैं और पर्वत अपने सुनिश्चित स्थान में स्थित रहते हैं, उसी प्रकार शरीर में दोनों वृक्कों (गुर्दो) को हम स्थापित करते हैं ॥७,१०१.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०२ – यज्ञे सूक्त

अग्नि की स्तुति, इंद्र की आराधना तथा यज्ञ मार्ग को जानने वाला देव

यदद्य त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन् होतश्चिकित्वन्न् अवृणीमहीह ।
ध्रुवमयो ध्रुवमुता शविष्ठैप्रविद्वान् यज्ञमुप याहि सोमम् ॥७,१०२.१॥

हे ज्ञानी होता अग्निदेव ! हम आपका वरण करते हैं। हे बलशाली ! आप शान्तिपूर्वक पधारें एवं सोम रूप हवि को ग्रहण करें ॥७,१०२.१॥

समिन्द्र नो मनसा नेष गोभिः सं सूरिभिर्हरिवन्त्सं स्वस्त्या ।
सं ब्रह्मणा देवहितं यदस्ति सं देवानां सुमतौ यज्ञियानाम् ॥७,१०२.२॥

हे हरित वर्ण के अश्वों वाले इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ मन, उत्तम वाणी एवं कल्याणकारी विद्वानों से युक्त करें । हमें

देवों का हित करने वाले ज्ञान तथा देवों की शुभ मति की ओर ले चलें ॥७,१०२.२॥

यान् आवह उशतो देव देवांस्तान् प्रेरय स्वे अग्ने सधस्थे ।
जक्षिवांसः पपिवांसो मधून्यस्मै धत्त वसवो वसूनि
॥७,१०२.३॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! हवि की कामना वाले जिन देवताओं का आपने आवाहन किया है, कृपा करके उन्हें सुनिश्चित उत्तम स्थान में भेजें। हवि आदि का सेवन मधुर रसों (घृत, सोम आदि) का पान करने वाले हे वसुगणो !आप याजक को धन धान्यादि प्रदान करें ॥७,१०२.३॥

सुगा वो देवाः सदना अकर्म य आजग्म सवने मा जुषाणाः ।
वहमाना भरमाणाः स्वा वसूनि वसुं घर्मं दिवमा रोहतानु
॥७,१०२.४॥

हे देवताओ !हमने आप सब के लिए उत्तम आवासों का निर्माण किया है ।इस यज्ञ में अर्पित हवि को आपने ग्रहण किया है। अब आप प्रसन्न होकर अपने श्रेष्ठ धन हमें प्रदान

करके स्वयं प्रकाशित द्युलोक पर आरोहण करें ॥७,१०२.४॥

यज्ञ यज्ञं गछ यज्ञपतिं गछ ।
स्वां योनिं गछ स्वाहा ॥७,१०२.५॥

हे यज्ञदेव !आप हमारे यज्ञ, यज्ञपति तथा अपने आश्रयस्थान को जाएँ, यह आहुति आपके लिए अर्पित है ॥७,१०२.५॥

एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः ।
सुवीर्यः स्वाहा ॥७,१०२.६॥

(हे याजक) ! यह सूक्त एवं मंत्रों द्वारा विधिपूर्वक होने वाला यज्ञ आपको कल्याणकारी सामर्थ्य से युक्त करे । (इस भाव से यह आहुति समर्पित है ॥७,१०२.६॥

वषड्धुतेभ्यो वषडहुतेभ्यः ।
देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित ॥७,१०२.७॥

जिन देवगणों का यजन किया गया एवं जिनका यजन नहीं किया गया, उन समस्त देवताओं के लिए यह आहुति अर्पित है । हे मार्गों को जानने वाले देवताओ ! जिस मार्ग से आप आयह थे, इस सत्कर्म के समापन के पश्चात् आप उसी मार्ग से अपने-अपने स्थानों को वापस जाएँ ॥७,१०२.७॥

मनसस्पत इमं नो दिवि देवेषु यज्ञम् ।
स्वाहा दिवि स्वाहा पृथिव्यां स्वाहान्तरिक्षे स्वाहा वाते धां स्वाहा ॥७,१०२.८॥

हे मन के स्वामी ! आप हमारे इस यज्ञ को द्युलोक में देवताओं तक पहुँचाएँ एवं पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्युलोक एवं समस्त वायु मण्डल में इसे स्थापित करें। यह आहुति स्वाहुत (भली प्रकार समर्पित) हो ॥७,१०२.८॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०३ – हवि सूक्त

इंद्र की स्तुति

सं बर्हिरक्तं हविषा घृतेन समिन्द्रेण वसुना सं मरुद्भिः ।
सं देवैर्विश्वदेवेभिरक्तमिन्द्रं गच्छतु हविः स्वाहा ॥७,१०३.१॥

घृत एवं हवन सामग्री से आहुतियाँ भरपूर (पर्याप्त मात्रा में प्रदान की गई हैं। इनसे इन्द्र, वसु, मरुत् सहित समस्त देवतागण तृप्त हों । यह उत्तम आहुति देवताओं में प्रमुख देव इन्द्र को प्राप्त हो ॥७,१०३.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०४ – वेदी सूक्त

यज्ञ वेदी

परि स्तृणीहि परि धेहि वेदिं मा जामिं मोषीरमुया शयानाम् ।
होतृषदनं हरितं हिरण्ययं निष्का एते यजमानस्य लोके ॥७,१०४.१॥

(हे यज्ञदेव !) चारों ओर फैलकर वेदी को आच्छादित कर लें । याजक की बहन (भावना-गति) को बाधित न करें । याजकों का घर हरीतिमायुक्त हो तथा यजमान को इस लोक में स्वर्ण-मुद्राएँ अथवा अलंकार प्राप्त हों ॥७,१०४.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०५ – दुस्वप्ननाशन सूक्त

बुरे स्वप्न का विनाश

पर्यावर्ते दुष्वप्न्यात्पापात्स्वप्न्यादभूत्याः ।
ब्रह्माहमन्तरं कृण्वे परा स्वप्नमुखाः शुचः ॥७,१०५.१॥

हम दुःस्वप्न से होने वाले पाप से मुक्त होते हैं। हम ज्ञान की मध्यस्थता द्वारा स्वप्नों को एवं शोक आदि से उत्पन्न पाप को दूर करते हैं, इनसे मुक्त होते हैं ॥७,१०५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०६ – दुःस्वप्ननाशन सूक्त

स्वप्न में खाए हुए अन्न के कल्याणकारी होने की कामना

यत्स्वप्ने अन्नमश्नामि न प्रातरधिगम्यते ।
सर्वं तदस्तु मे शिवं नहि तद्दृष्यते दिवा ॥७,१०६.१॥

हमने स्वप्न में जो अन्न खाया है, उसका प्रातः जागने पर कोई बोध नहीं होता और वह दिन में दिखाई नहीं देते फिर भी वह सब हमारे लिए कल्याणकारी हों ॥७,१०५.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०७ – आत्मन -अहिंसन सूक्त

धरती, आकाश अंतरिक्ष और मृत्यु को नमस्कार

नमस्कृत्य द्यावापृथिवीभ्यामन्तरिक्षाय मृत्यवे ।
मेक्षाम्यूर्ध्वस्तिष्ठन् मा मा हिंसिषुरीश्वराः ॥७,१०७.१॥

हम द्यावा-पृथिवी, अन्तरिक्ष एवं मृत्यु को नमस्कार करते हैं। इनके स्वामी अग्नि, वायु और सूर्यदेव सहित मृत्यु हमारा वध न करे, हम दीर्घकाल तक इसी लोक में रहें ॥७,१०७.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०८ – क्षत्रिय सूक्त

राजा का आह्वान

को अस्या नो द्रुहोऽवद्यवत्या उन् नेष्यति क्षत्रियो वस्य इछन् ।
को यज्ञकामः क उ पूर्तिकामः को देवेषु वनुते दीर्घमायुः ॥७,१०८.१॥

परस्पर द्रोह वृत्ति रूपी, इस निंदनीय दुर्गति रूपी पिशाचिनी से हमें कौन बचाएगा?इस यज्ञ-अनुष्ठान की पूर्णता की कामना करने वाला कौन है ? हमें धन-ऐश्वर्य कौन देगा ?हमें दीर्घायुष्य कौन देवता प्रदान करता है? ॥७,१०८.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १०९ – गौ सूक्त

बृहस्पति देव की स्तुति

कः पृश्निं धेनुं वरुणेन दत्तामथर्वने सुदुघां नित्यवत्साम् ।
बृहस्पतिना सख्यं जुषणो यथावशं तन्वः कल्पयाति
॥७,१०९.१॥

अथर्वा ने वरुणदेव को, विविध वर्णो की, सुखपूर्वक दुग्ध देने वाली, बछड़ेसहित गौएँ प्रदान की। बृहस्पति देव के मित्र प्रजापतिदेव इन गौओं को सब प्रकार से स्वस्थ रखें ॥७,१०९.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११० – दिव्यवचन सूक्त

ब्रह्मचारी का वर्णन

अपक्रामन् पौरुषेयाद्वृणानो दैव्यं वचः ।
प्रणीतीरभ्यावर्तस्व विश्वेभिः सखिभिः सह ॥७,११०.१॥

(हे साधक !) आप अपने समस्त सहपाठियों के साथ दिव्य वचनों को सुनकर उसे धारण करें एवं सामान्य मनुष्यों द्वारा किए जाने वाले कार्यों से हटकर उच्च आचरण करते हुए देवत्व की ओर अग्रसर हों ॥७,११०.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १११ – अमृतत्व सूक्त

अग्नि की स्तुति

यदस्मृति चकृम किं चिदग्न उपारिम चरणे जातवेदः ।
ततः पाहि त्वं नः प्रचेतः शुभे सखिभ्यो अमृतत्वमस्तु नः ॥७,१११.१॥

हे अग्ने ! स्मरण के अभाव में हमसे आचरण सम्बन्धी जो भूलें हो गई हैं, आप उन अपराधों को क्षमा करें। हे जातवेदा अग्निदेव ! आप इस प्रकार की भूलों से बचाएँ एवं हमारे मित्रों सहित हमें अमरता प्रदान करें ॥७,१११.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११२ – संतरण सूक्त

सूर्य की स्तुति

अव दिवस्तारयन्ति सप्त सूर्यस्य रश्मयः ।
आपः समुद्रिया धारास्तास्शल्यमसिस्रसन् ॥७,११२.१॥

सूर्यदेव अपनी सात-किरणों से समुद्र की जल-धाराओं को पहले द्युलोक तक ले जाते हैं, फिर वहाँ से वृष्टि करते हैं। हे व्याधिग्रस्त पुरुष ! वह तुम्हारे शल्य के समान पीड़ादायक "कास" आदि रोग को नष्ट करें ॥ ॥७,११२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११३- शत्रुनाशन सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

यो न स्तायद्दिप्सति यो न आविः स्वो विद्वान् अरणो वा नो अग्ने ।
प्रतीच्येत्वरणी दत्वती तान् मैषामग्ने वास्तु भून् मो अपत्यम् ॥७,११३.१॥

हे अग्निदेव ! प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से जो हमें सताता है, वह चाहे हमारा अपना सम्बन्धी हो अथवा पराया, वह विद्वान् ही क्यों न हो, उसका निवास नष्ट हो जाए और वह सन्तानहीन हो जाए। उसे पीछे से दाँतों वाली रस्सी (चाबुक) पीड़ा पहुँचाए ॥७,११३.१॥

यो नः सुप्तान् जाग्रतो वाभिदासात्तिष्ठतो वा चरतो जातवेदः।
वैश्वानरेण सयुजा सजोषास्तान् प्रतीचो निर्दह जातवेदः ॥७,११३.२॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! जो दुष्ट मुझ सोते या जागते हुए को अथवा चलते या बैठे हुए को, मारने की इच्छा करें, उसे आप वैश्वानर अग्निदेव के सहयोग से नष्ट कर दें ॥७,११३.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११४ – राष्ट्रभृत सूक्त

अग्नि की स्तुति, जुए की देवियां तथा गंधर्व

इदमुग्राय बभ्रवे नमो यो अक्षेषु तनूवशी ।
घृतेन कलिं शिक्षामि स नो मृडातीदृशे ॥७,११४.१॥

उग्रवीर बभुदेव को हम नमस्कार करते हैं एवं अभिमन्त्रित घृत द्वारा पाँसों को ताड़ित करते हैं। पाँसों को वश में रखने वाले यह देव हमें इस जीत-हार वाले (जीवन रूपी) खेल में जीत प्रदान कर सुखी करें ॥७,११४.१॥

घृतमप्सराभ्यो वह त्वमग्ने पांसून् अक्षेभ्यः सिकता अपश्च ।
यथाभगं हव्यदातिं जुषाणा मदन्ति देवा उभयानि हव्या ॥७,११४.२॥

हे अग्निदेव ! आप अन्तरिक्ष में निवास करने वाली अप्सराओं के लिए हमारे द्वारा अर्पित घृत पहुँचाएँ । जीत-हार के इस खेल में जो हमारे प्रतिद्वन्द्वी हैं, उन्हें जल और

धूल से त्रस्त करें । इन्द्रदेव सहित अन्य देवता अपना हविर्भाग ग्रहण कर तृप्त हों ॥७,११४.२॥

अप्सरसः सधमादं मदन्ति हविर्धानमन्तरा सूर्यं च ।
ता मे हस्तौ सं सृजन्तु घृतेन सपत्नं मे कितवं रन्धयन्तु ॥७,११४.३॥

सूर्यलोक में, भूलोक एवं दोनों के मध्य अन्तरिक्ष में अर्पित हवि से जो अप्सराएँ हर्षित हो रही हैं, वह प्रसन्न होकर, मेरे प्रतिद्वन्द्वी को मेरे वशीभूत करें । जैसे घृत सार है, वैसे ही खेल का सार विजय है, यह विजय रूपी घृत हमें हस्तगत कराएँ ॥७,११४.३॥

आदिनवं प्रतिदीव्ने घृतेनास्मामभि क्षर ।
वृक्षमिवाशन्या जहि यो अस्मान् प्रतिदीव्यति ॥७,११४४॥

प्रतिद्वन्द्वियों के साथ इस खेल में हमें विजयरूप घृत से युक्त करें । हमारे प्रतिद्वन्द्वी को आप उसी तरह नष्ट करें, जिस प्रकार बिजली वृक्ष का नाश कर देती है ॥७,११४.४॥

यो नो द्युवे धनमिदं चकार यो अक्षाणां ग्लहनं शेषणं च ।
स नो देवो हविरिदं जुषाणो गन्धर्वेभिः सधमादं मदेम
॥७,११४.५॥

जिन देवताओं ने कृपा करके हमें इस खेल में विजयी बनाया है, जिन्होंने हमारे प्रतिपक्षी के अक्षों को कमजोर किया एवं हमें उसका धन दिलाया; वह देव हमारे द्वारा अर्पित हवि को ग्रहण करें । हम आनंदित गन्धर्वो के साथ आनंद पाएँ ॥७,११४.५॥

संवसव इति वो नामधेयमुग्रंपश्या राष्ट्रभृतो ह्यक्षाः ।
तेभ्यो व इन्दवो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम्
॥७,११४.६॥

हे गन्धर्वो !आप उग्र दृष्टि वाले, राष्ट्र के भरण-पोषण करने वाले एवं संवसव" (भली प्रकार आवास देने) नाम वाले हैं । हम आपका यजन करते हैं, आप अर्पित हवि से प्रसन्न होकर हमें सम्पदाओं का स्वामी बनाएँ ॥७,११४.६॥

देवान् यन् नाथितो हुवे ब्रह्मचर्यं यदूषिम ।

अक्षान् यद्बभ्रून् आलभे ते नो मृडन्त्वीदृशे ॥७,११४.७॥

हम धन प्राप्ति की इच्छा से अग्नि आदि देवताओं का आवाहन करते हैं। हम ब्रह्मचर्य व्रतपूर्वक बभुदेव के पाँसों को स्पर्श करने का साहस करते हैं, वह देव हमें विजय-सुख प्रदान करें ॥७,११४.७॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११५ – शत्रुनाशन सूक्त

अग्नि और इंद्र की प्रशंसा

अग्न इन्द्रश्च दाशुषे हतो वृत्राण्यप्रति ।
उभा हि वृत्रहन्तमा ॥७,११५.१॥

हे अग्निदेव एवं इन्द्रदेव ! आप दोनों देव वृत्र का संहार करने वाले हैं। आप कृपा कर हम विदाताओं को घेरने वाले पापों को भी क्षय करें । हम सब पाप-मुक्त हों ॥७,११५.१॥

याभ्यामजयन्त्स्वरग्र एव यावातस्थतुर्भुवनानि विश्वा ।
प्र चर्षणीवृषणा वज्रबाहू अग्निमिन्द्रं वृत्रहणा हुवेऽहम् ॥७,११५.२॥

जिन अग्निदेव और इन्द्रदेव ने देवताओं का सहयोग करके, उन्हें स्वर्ग प्राप्त कराया और समस्त भूतों में व्याप्त हो गए हैं। जो देवकर्मों के साक्षी एवं कामनाओं की पूर्ति करने

वाले हैं, ऐसे अग्निदेव एवं वज्रधारी इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं ॥७,११५.२॥

उप त्वा देवो अग्रमीच्चमसेन बृहस्पतिः ।
इन्द्र गीर्भिर्न आ विश यजमानाय सुन्वते ॥७,११५.३॥

हे इन्द्रदेव ! देवताओं के हितैषी बृहस्पतिदेव चमस पात्र से (यज्ञाहुति द्वारा) आपको (आपका समर्थन प्राप्त किया है। उसी प्रकार सोम तैयार करने वाले इन यजमानों से प्रसन्न होकर, आप इनकी स्तुति स्वीकार करें एवं इन्हें धन प्रदान करें ॥७,११५.३॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११६ – आत्मा सूक्त

वृषभ की प्रशंसा

इन्द्रस्य कुक्षिरसि सोमधान आत्मा देवानामुत मानुषाणाम् । इह प्रजा जनय यास्त आसु या अन्यत्रेह तास्ते रमन्ताम् ॥७,११६.१॥

हे वृषभ ! आप सोमधारण करने वाले हैं। आप मानवों एवं देवताओं के आत्मारूप हैं। आप यहाँ प्रजा को उत्पन्न करें । यहाँ अथवा अन्यत्र जहाँ भी प्रजाएँ हों, वह सुखपूर्वक रहें ॥७,११६.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११७ – पापनाशन सूक्त

द्यावा पृथ्वी की स्तुति तथा पाप से छुटकारा

शुम्भनी द्यावापृथिवी अन्तिसुम्ने महिव्रते ।
आपः सप्त सुस्रुवुर्देवीस्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥७,११७.१॥

द्यावा-पृथिवी महान् व्रत धारण करते हैं। यह हमें समीप से सुख देने वाले हैं । यहाँ सात दिव्य धाराएँ प्रवाहित होती रहती हैं, यह हमें पाप से बचाएँ ॥७,११७.१॥

मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत ।
अथो यमस्य पड्वीशाद्विश्वस्माद्देवकिल्बिषात्॥७,११७.२॥

वरुणदेव हमें शाप, क्रोध एवं यम के बन्धनों से बचाएँ । देवगणों के प्रति हुए अनुचित कर्मजनित दोषों से भी वरुणदेव हमें मुक्त करें ॥७,११७.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त ११८- शत्रुनाशन सूक्त

वाणापर्ण्य जड़ीबूटी का वर्णन

तृष्टिके तृष्टवन्दन उदमूं छिन्धि तृष्टिके ।
यथा कृतद्विष्टासोऽमुष्मै शेप्यावते ॥७,११८.१॥

हे काम तृष्णा ! हे धन तृष्णा ! तुम अपने कुप्रभाव से स्त्री-पुरुष में द्वेष पैदा कर देती हो, उनके स्नेह सम्बन्धों को काट देती हो ॥७,११८.१॥

तृष्टासि तृष्टिका विषा विषातक्यसि ।
परिवृक्ता यथासस्यृषभस्य वशेव ॥७,११८.२॥

हे तृष्णा ! तुम लोभमय हो । तुम विष लता जैसे विषैले प्रभाव वाली हो । जिस प्रकार वृषभ द्वारा त्याग देने से गाय बिना बछड़े वाली रहती है, उसी प्रकार तुम त्यागने योग्य हो ॥७,११८.२॥

सूक्त ११९ – शत्रुनाशन सूक्त
अग्नि की स्तुति तथा मानसिक व्याधि

आ ते ददे वक्षणाभ्य आ तेऽहं हृदयाद्ददे ।
आ ते मुखस्य सङ्काशात्सर्वं ते वर्च आ ददे ॥७,११९.१॥

(हे द्वेषकारिणी अधम स्त्री !) हम तेरे मुख, वक्षस्थल आदि आकर्षक अंगों के तेज को नष्ट करते हैं। हृदय की कुत्सित भावनाओं को नष्ट करते हैं ॥७,११९.१॥

प्रेतो यन्तु व्याध्यः प्रानुध्याः प्रो अशस्तयः ।
अग्नी रक्षस्विनीर्हन्तु सोमो हन्तु दुरस्यतीः ॥७,११९.२॥

हे विकारों से बचने वाले स्त्री या पुरुष ! तुम्हारी शारीरिक व्याधियाँ एवं मानसिक दुःख दूर हों । तुम लोक-निन्दा से मुक्त हो । अग्निदेव राक्षसियों का नाश करें तथा सोमदेव अनिष्ट चिन्तन की प्रेरणा देने वाली पिशाचिनियों का संहार करें ॥७,११९.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १२० – पापलक्षणनाशन सूक्त

सविता देव की स्तुति , दरिद्रता का विषय, अग्नि देव की प्रशंसा तथा पुण्य और पापकारिणी लक्ष्मियां

प्र पतेतः पापि लक्ष्मि नश्येतः प्रामुतः पत ।
अयस्मयहनाङ्केन द्विषते त्वा सजामसि ॥७,१२०.१॥

हे पापलक्ष्मी ! तुम यहाँ से कहीं दूर चली जाओ । यहाँ-वहाँ से हटकर हमारे शत्रु के पास स्थिर हो जाओ। लोह शूल के द्वारा हम आपको अपने द्वेषी की ओर प्रेरित करते हैं ॥७,१२०.१॥

या मा लक्ष्मीः पतयालूरजुष्टाभिचस्कन्द वन्दनेव वृक्षम् ।
अन्यत्रास्मत्सवितस्तामितो धा हिरण्यहस्तो वसु नो रराणः ॥७,१२०.२॥

वन्दना नामक लता जिस प्रकार वृक्ष पर चढ़कर उसे सुखाती है, उसी प्रकार यह अलक्ष्मी हमारे ऊपर आरोपित होकर हमें सुखा रही है । हे सूर्यदेव ! आप इस अलक्ष्मी को हमसे दूर करें तथा हमें सुवर्ण प्रदान करें ॥७,१२०.२॥

एकशतं लक्ष्म्यो मर्त्यस्य साकं तन्वा जनुषोऽधि जाताः ।
तासां पापिष्ठा निरितः प्र हिण्मः शिवा अस्मभ्यं जातवेदो नियछ ॥७,१२०.३॥

मानव के जन्म के साथ एक सौ एक लक्ष्मियों ने जन्म लिया है। इनमें जो पापमय अलक्ष्मियाँ हैं, उन्हें हम सदा-सदा के लिए दूर हटाते हैं । हे जातवेदा अग्निदेव ! इनमें जो कल्याणकारी लक्ष्मियाँ हैं, उन्हें आप हमारे पास लाएँ ॥७,१२०.३॥

एता एना व्याकरं खिले गा विष्ठिता इव ।
रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम् ॥७,१२०.४॥

जैसे गोशाला में रहने वाली गौओं को (गुण-अवगुण के आधार पर) दो भागों में बाँट लेते हैं, वैसे ही समस्त लक्ष्मियों

में से पुण्यकारक लक्ष्मियाँ हमारे पास आनन्द से रहें तथा पापमयी अलक्ष्मियाँ हम से दूर हो जाएँ ॥७,१२०.४॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १२१ – ज्वरनाशन सूक्त

उष्णिक ज्वर से संबंधित देव की प्रशंसा

नमो रूराय च्यवनाय नोदनाय धृष्णवे ।
नमः शीताय पूर्वकामकृत्वने ॥१॥

तपाने वाले, हिलाने वाले, भड़काने वाले, डराने वाले,शीत लगकर आने वाले एवं शरीर को तोड़ने (कृश करने वाले ज्वर को नमस्कार है ॥७,१२१.४॥

यो अन्येद्युरुभयद्युरभ्येतीमं मण्डूकम् ।
अभ्येत्वव्रतः ॥२॥

जो ज्वर एक दिन छोड़कर आते हैं, जो दो दिन छोड़कर आते हैं तथा जो बिना किसी निश्चित समय के आते हैं, वह इस मेढक (संकीर्ण या आलसी व्यक्ति) के पास जाएँ ॥७,१२१.२॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १२२- शत्रुनिवारण सूक्त

इंद्र की स्तुति

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः ।
मा त्वा के चिद्वि यमन् विं न पाशिनोऽति धन्वेव तामिहि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने मोरपंखी वर्ण वाले अश्वों (सतरंगी किरणों) के साथ यहाँ आएँ । बहेलिया जैसे पक्षी को जाल में फंसा लेता है, वैसे आपको कोई (वाग् जाल में) न फैंसा सके। ऐसे (कुटिलों) को आप रेतीले क्षेत्र की तरह लाँघकर यहाँ पधारें ॥७,१२२.१॥

॥अथर्ववेद – सप्तमं काण्डम्॥

सूक्त १२३ – वर्मधारण सूक्त

सोम व वरुण की स्तुति

मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥१॥

हे वीर ! आप जैसे विजयाभिलाषी के मर्म स्थानों को हम कवच से सुरक्षित करते हैं। सोमदेव के अमृतमयी आच्छादन के द्वारा आप सुरक्षित रहें । वरुणदेव आपको महान् सुख दें । विजय प्राप्त कराने के लिए इन्द्रादि सभी देवता आपको प्रोत्साहित करते रहें ॥७,१२३.१॥

॥ इति सप्तम काण्डम्॥